भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक— साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ३२

सोमवार १२ मई, '६९

अन्य पृष्ठों पर

…गठरी फेंकें —निर्मलचन्द्र ३९४

डा० जाकिर हुसैन गाँव की क्रान्ति —सम्पादकीय ३९५

उन्होंने शिक्षा को पक्षपात की प्रवृत्तियों से बचाया —जयप्रकाश नारायण ३९७

भगवत्-प्रेरित काम… —विनोबा ३९९

जिलादान के बाद क्या ? ४००

'तूफान' में 'उफान' का अभाव —रामचन्द्र 'राही' ४०३

पुस्तक-परिचय : आन्दोलन के समाचार ४०७

श्रद्धांजलि

पटना। श्री जयप्रकाश नारायण ने राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि वह हमारे असाम्प्रदायिक राष्ट्रवाद तथा धर्म-निरपेक्ष लोकतंत्र के प्रमुख निर्माताओं में से थे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा : "डा० हुसैन की सज्जनता, सच्चरित्रता, सुसंस्कृति, उदार जीवन दर्शन तथा शिक्षा-क्षेत्र में किये गये उनके प्रयत्नों ने भारत की समृद्ध विरासत पर अमिट छाप डाल दी है। आनेवाली पीढ़ी के लिए उनका उदाहरण एक आदर्श होगा।"

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

साम्यवाद और मैं

साम्यवाद के अर्थ की छानबीन की जाय तो अन्त में हम इसी निश्चय पर पहुँचते हैं कि उसका मतलब है— वर्गहीन समाज। यह बेशक उत्तम आदर्श है और उसके लिए अवश्य कोशिश होनी चाहिए। लेकिन जब इस आदर्श को हासिल करने के लिए वह हिंसा का प्रयोग करने की बात करने लगता है, तब मेरा रास्ता उससे अलग हो जाता है।

हम सब जन्म से समान ही हैं, लेकिन हम हमेशा से भगवान की इस इच्छा की अव[illegible]ा करते आये हैं। असमानता या ऊँच-नीच की भावना एक बुराई है, किन्तु मैं इस बुराई को मनुष्य के मन से उसे तलवार दिखाकर निकाल भगाने में विश्वास नहीं करता। मनुष्य के मन की शुद्धि के लिए यह कोई कारगर साधन नहीं है।

…जनता पर जबरदस्ती लादा जानेवाला साम्यवाद, भारत को रुचेगा नहीं, भारत की प्रकृति के साथ उसका मेल नहीं बैठ सकता। हाँ, यदि साम्यवाद बिना किसी हिंसा के आये तो हम उसका स्वागत करेंगे। क्योंकि तब कोई मनुष्य किसी भी तरह की सम्पत्ति जनता के प्रतिनिधि की तरह और जनता के हित के लिए ही रखेगा; अन्यथा नहीं। करोड़पति के पास उसके करोड़ रहेंगे तो सही, लेकिन वह उन्हें अपने पास धरोहर के रूप में जनता के हित के लिए ही रखेगा और सर्वसामान्य प्रयोजन के लिए आवश्यकता होने पर इस सम्पत्ति को राज्य अपने अधिकार में ले सकेगा।[1]

साम्यवादियों और समाजवादियों का कहना है कि आज वे आर्थिक समानता को जन्म देने के लिए कुछ नहीं कर सकते। वे उसके लिए प्रचार भर कर सकते हैं। इसके लिए लोगों में द्वेष या वैर पैदा करने और उसे बढ़ाने में उनका विश्वास है। उनका कहना है कि राज्यसत्ता पाने पर वे लोगों से समानता के सिद्धान्त पर अमल करायेंगे। मेरी योजना के अनुसार राज्य प्रजा की इच्छा को पूरा करेगा, न कि लोगों को हुक्म देगा या अपनी आज्ञा जबरन उन पर लादेगा। मैं घृणा से नहीं, परन्तु प्रेम की शक्ति से लोगों को अपनी बात समझाऊँगा और अहिंसा के द्वारा आर्थिक समानता पैदा करूँगा। मैं सारे समाज को अपने मत का बनाने तक रूकूँगा नहीं, बल्कि अपने पर ही यह प्रयोग शुरू कर दूँगा। इसमें जरा भी शक नहीं कि अगर मैं ५० मोटरों का तो क्या, १० बीघा जमीन का भी मालिक हूँ, तो मैं अपनी कल्पना की आर्थिक समानता को जन्म नहीं दे सकता। उसके लिए मुझे गरीब बन जाना होगा। यही मैं पिछले ५० सालों से या उससे भी ज्यादा वक्त से करता आया हूँ।[2]

मो. क. गांधी

(१) 'हरिजन' : १३-३-'३७ (२) 'हरिजन सेवक' : ३१-३-'४६।

www.vinoba.in

आरोहण की अंतिम चढ़ाई पर गठरी फेंकें

खादी के शीर्षस्थ सेवक श्री ध्वजा प्रसाद साहू आज कम-से-कम चौदह वर्ष से चिल्ला रहे हैं कि "जिसका विकास अवरुद्ध है, उसकी मृत्यु ध्रुव है।" अब तो खादी के विकास अवरुद्ध होने की ही चिन्ता नहीं, इसके गुण और विस्तार के ह्रास के आँकड़े सामने आने लगे। शताब्दी-वर्ष में बापू के सौर्य मंडल के केन्द्र का यह धूमिल चित्र स्मरण मात्र से बेचैन कर देता है। खादी-संस्थाओं में लगे रचनात्मक जगत् के महारथी और अतिरथी एक ओर तथा दूसरी ओर राज्यदान के रूप में उभड़ रहे ग्रामस्वराज्य के चित्र के बीच इस देदीप्यमान नक्षत्र के प्रच्छन्न प्रकाश को तिरोहित होते देखकर भी तर्क इस सत्य को ग्रहण नहीं कर पा रहा है। यदि खादी-विचार सत्य है तो ध्रुव भी, और तब क्या यह मानें कि जो समाप्त हो रहा है, वह बाह्य आवरण है, सत्य युग-धर्म की नयी चादर ओढ़कर सामने आयेगा?

दूसरे विकल्प की आशा संजोकर हजारों सेवकों के असमाधान को टेक मिलती है, पर क्या सत्य के इस नये स्वरूप का भी दर्शन बिना पुरुषार्थ के होगा? सन् १९६५, '६६, '६७, '६८ अब '६९ भी, न जाने कितनी बार इन पाँच वर्षों के बीच खादी-कमीशन के अध्यक्ष श्री ढेबरजी विनोबा के पास आये। हमेशा एक ही समस्या और निदान भी एक ही, पर सब मिलाकर मर्ज बढ़ता ही गया। हम क्या मानें? क्या यह कहा जा सकता है कि विनोबा के बताये रास्ते पर चलकर भी कोई प्रकाश नहीं मिला? यदि उनके विचार को हम व्यवहार में नहीं ला सके तो त्रुटि कहाँ है? क्या विचार के व्यवहार के लिए परिस्थिति परिपक्व नहीं हो सकी? या आज की खादी की प्रक्रिया एवं तंत्र का ढाँचा निष्प्राण हो गया, जो अपनी अंत्येष्टि की प्रतीक्षा कर रहा है।

जहाँ तक मेरी जानकारी है, नये विचार के आचार की ओर कोई प्रयास नहीं हो रहा है। जो कुछ भी अबतक हुआ, वह 'पीस मील प्रोग्राम' था, जो पुराने ढाँचे को समय-समय पर स्वर्ण-भस्म देकर उसके हृदय की गति को अवरुद्ध होने से बचाता रहा! परिस्थिति परिपक्व नहीं है, इसे मानने का कोई कारण नहीं, नित्य हजारों-हजार लोगों का ग्रामदान-समर्पण ग्राम-भावना की प्यास का प्रमाण है। इस कारण सहज ही हम तीसरे विकल्प पर आ पहुँचते हैं। महर्षि परशुराम ने समाज की अत्यन्त सेवा की, पर 'रामावतार' होते ही सदेह अन्तर्धान हो गये।

रचनात्मक जगत् राजनैतिक पार्टियों को बापू की अन्तिम वसीयतनामे की सीख देते नहीं थकते हैं, पर क्या सन् १९४७ के नवसंस्करण में प्रकट बापू को व्याकुलता को पुस्तकों में प्रकाशित कर खादी-संस्थाएँ अपने कर्तव्य का इतिश्री मान लेंगी?

सर्व सेवा संघ ने पुराने सेवकों की सफेद चादर में स्वतंत्र समिति बनाकर इस महत्त्व की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी को दुर्लक्ष किया है। सेवकों की समवेत सभा को इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना है।

सहज ही कोई ठोस प्रस्ताव अपेक्षित है। पुराने शरीर का विसर्जन हो, यह तो स्पष्ट है। इस चिन्तन को स्वीकार करने में सेवकों को संगठन के शरीर का मोह तथा नये चित्र को इसी जन्म में गढ़ लेने की आकांक्षा बाधा उत्पन्न करती है। यदि इस पर थोड़ा और स्थूल रूप से विचार करें तो हमारे सामने यह प्रश्न आयेगा कि आज के आन्दोलन का प्रमुख वाहक खादी-संगठन है। बिहार-दान का किनारा, तमिलनाडु-दान की तीव्रता एवं उत्तरप्रदेश जैसे विशाल राज्यदान के उपक्रम के पीछे वाहक शक्ति खादी-संगठन की ही है। पर बाबा पिछले वर्षों से कहने लगे हैं कि पर्वत के उत्तुङ्ग शृंग की चढ़ाई की अन्तिम मंजिल पर गठरी फेंकनी पड़ती है।

कमीशन का पैसा, तंत्र, व्यापार, स्टाक, इमारत, सभी हमारे बाधक हैं। वास्तव में आज का शरीर वास्तविक शरीर नहीं है। इसमें प्रभुत्व का प्रदर्शन, ऐश्वर्य का एहसास तथा तंत्र की दुर्गन्ध आती है, जिसमें समाज के क्रुद्ध मानस ने आग फूँक दी, पटना खादी-इम्पोरियम की काली दीवालें प्रतीकस्वरूप आज भी खड़ी हैं। खादी का वास्तविक रूप वह है, जिसे देखकर समाज के मन में श्रद्धा उत्पन्न हो, जो जीवन को आश्वासन देता हो। ऐसी खादी को जलानेवाले स्वयं समाप्त होंगे, जैसे अंग्रेजी शासन का हुआ। मुसोलिनी के दरबार में टंगी नग्न तलवार से जितना उसका हिंसक पराक्रम प्रकट होता था, उससे स्पष्ट सौम्य शक्ति अहिंसा के प्रतीक खादी से प्रकट होनी चाहिए।

मेरा मानना है कि खादी-संगठन कमीशन के पैसे और 'एग्रीड प्रोग्राम' से मुक्त होकर अपने कार्यकर्ताओं के हाथ में एक तकुए का चरखा देकर गाँव की ओर एक साथ भेजने का निश्चय करे तो देश-दान शीघ्र होगा। संस्था के बचे हुए मकान, सरंजाम आदि की शेष निखालिस कायिक शक्ति नवनिर्माण का जामन होगी। इससे आगे का चित्र उभड़नेवाली नयी शक्ति के नवीन मानस से बनेगा। आज अपनी ओर से ग्रामसभा के लिए भी कार्यक्रम गढ़ देने का मोह हमारे पुराने शरीर को ढोने की आकांक्षा मात्र है।

ग्रामदान से भेदासुर, बकासुर आदि का नष्ट तो प्रारम्भ हो गया है, पर खादी-संगठन का पुराना शिव-पिनाक मुक्त सेवक समाज की प्रतीक्षा में पड़ा, ग्राम-भावना को ग्राम-स्वराज्य के वरण से रोक रहा है, जिसके बिना 'रामावतार' प्रकट नहीं होगा।

—निर्मलचन्द्र

विनोबाजी का पता

C/o बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति,
कैम्प कार्यालय—जिला भूदान-यज्ञ कार्यालय
बरदवान कम्पाउण्ड, २२, राजस्थान रोड
राँची (बिहार)

डा० जाकिर हुसैन

जो इनसान था वह भगवान में मिला, और जाते-जाते हमारे लिए इनसानित की एक मिसाल छोड़ गया। गुणों की जिस थाती पर मनुष्य-जाति जिन्दा है, उसमें कुछ जोड़कर वह गया।

कौन मरा ? मात्र भारत का राष्ट्रपति, या एक ऊँचा इनसान, जो आजादी की लड़ाई में लड़ा, जिसने बच्चों को प्यार किया, और उन्हें इनसान बनाने की कोशिश की, जो धर्म का पाबन्द था लेकिन उन्माद से मुक्त रहा, जिसने ऊँचा-से-ऊँचा पद पाया लेकिन उसके मद से अलग रहा; उसने जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव देखे लेकिन जो कभी इनसान को भूला नहीं, और उसने कभी अपने भगवान को छोड़ा नहीं ?

विपन्नता और वैभव, दोनों से जो अंत तक अपनी मनुष्यता को बचाये रख सका, वह साधारण मनुष्य नहीं था। "पूरा भारत मेरा कुनबा, और हर भारतीय मेरा सगा"—जो बचपन से बुढ़ापे तक इस मंत्र के सहारे धर्म और राजनीति के तूफानों में अडिग खड़ा रह सका, वह केवल मुसलमान नहीं था। वह यह सब तो था ही, पर कुछ और भी था। यह 'कुछ और' ही तो है जो लाखों की आँखों में आँसू लाता है, और याद बनकर दिलों में छिपकर बैठ जाता है। इस 'कुछ और' के ही कारण सदियों बाद जब मनुष्य अपनी पुरानी धरोहर को टटोलता है तो उसे उसमें मौजूद पाता है। हृदय के धन का कभी क्षय नहीं होता।

भारतीय हृदय इक्कीस साल पहले गांधी के गांधीत्व को पूरे तौर पर नहीं पहचान सका, उसे कुछ समय लगेगा जाकिर हुसैन के बड़प्पन को पहचानने में। हमारा हृदय आज भी हिन्दू है, मुसलमान है, ऊँच है, नीच है, उत्तरी है, दक्षिणी है। वह अभी विशुद्ध भारतीय नहीं हुआ है। हम मनुष्य होते हुए भी मनुष्यता से दूर हैं लेकिन यह सौभाग्य है कि इस दूरी को पार करनेवाले हमारे बीच एक के बाद दूसरे आते गये, और हमें दिखाते गये कि दूरी तो है लेकिन ऐसी नहीं है जो पार न की जा सके। डा० जाकिर हुसैन उन लोगों में थे जिन्हें यह दूरी पार करने की कभी कोशिश नहीं करनी पड़ी। उनके जीवन में दूरी कभी थी ही नहीं। तभी तो हिन्दू-प्रधान राष्ट्र में एक मुसलमान को राष्ट्रपति होने का गौरव मिला ! जाकिर हुसैन के व्यक्तित्व में हिन्दू और मुसलमान, दोनों अपने बीच की दूरी भूलकर एक हो गये थे।

अगर डा० जाकिर हुसैन केवल राष्ट्रपति होते तो इतिहास की अनेक सूचियों में से एक में पड़े रहते, लेकिन उन्होंने तो इस देश के करोड़ों के हृदय में अपना स्थान युग-युग के लिए सुरक्षित कर लिया है।

गाँव की क्रान्ति

इस चुनाव, इस राजनीति, और इस प्रशासन से समाज-परिवर्तन की शक्ति कभी निकलेगी, इसमें भरोसा हमने अठारह साल पहले खो दिया। हमारे मित्र नक्सालवादी अब खो रहे हैं। हमने उसी वक्त समझ लिया था कि संस्था और सरकार को छोड़कर गाँव को पकड़ना चाहिए। यह नक्सालवादी भी अब शहर और कारखाने को छोड़कर गाँव को पकड़ रहे हैं। हम दोनों इस नतीजे पर पहुँच गये हैं कि नयी क्रान्ति का देवता गाँव ही है।

ग्रामदान और नक्सालवाद, दोनों 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' (डाईरेक्ट ऐक्शन) के कार्यक्रम हैं। दोनों मानते हैं कि पीड़ित मानवता की मुक्ति राजधानियों में नहीं है, और आज की राजनीति में तो कतई नहीं है। नक्सालवादी को यह शिकायत है कि उन कम्युनिस्टों ने भी जो मार्क्स का नाम लेते थे 'सर्वहारा की क्रान्ति' को चुनाव और सरकार के पूँजीवादी मायाजाल में फँसा दिया। हमें भी यही शिकायत है कि हमारे नेताओं ने देश को पूँजीवादी मायाजाल में फँसा दिया।

अभी १ मई को कलकत्ता में नक्सालवादियों ने प्रदर्शन किया। नक्सालबाड़ी के बाद कलकत्ता में वे खुलकर एक नयी शक्ति बनकर प्रकट हुए हैं। उन्होंने एक नयी पार्टी बना ली है जिसे वे 'कम्युनिस्ट मार्क्सवादी-लेनिनवादी' कहते हैं। इसमें माओ का नाम नहीं है, लेकिन उनके हाथ में तस्वीर उसीकी है। उन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद से अलग कर लिया है। एक कारखानों का साम्यवाद है, दूसरा खेतों का। हमारा ग्रामदान भी 'खेतिहर सर्वोदय' है।

नक्सालवादी कहता है 'हमें बुर्जुआ साम्यवाद नहीं चाहिए।' अगर उसी भाषा का प्रयोग करें तो हम भी कह सकते हैं कि हमें 'बुर्जुआ सर्वोदय' नहीं चाहिए। नक्सालवादी ने तय किया है कि क्रान्ति बन्दूक की नली में है, इसलिए उसकी कोशिश है कि गाँव के किसान-मजदूर हाथ में बन्दूक लेकर सामने आयें, 'गुरिल्ला सिपाही' बनें। वे सामने आयेंगे तो गाँव-गाँव में संघर्ष होंगे, मरने-मारने का क्रम चलेगा, अराजकता फैलेगी, गृहयुद्ध होगा। नक्सालवादी कहता है कि जो होना होगा होगा, लेकिन इससे शोषितों की शक्ति बनेगी और एक दिन सत्ता बन्दूक के हाथ आयेगी और क्रान्ति पूरी होगी।

यही तो ग्रामदान नहीं चाहता। हम नक्सालवादी मित्रों से कहना चाहते हैं कि कुछ भी कीजिए सत्ता बन्दूक के हाथ मत जाने दीजिए। सत्ता मनुष्य के लिए है तो मनुष्य के हाथ में रहनी चाहिए। सत्ता और सम्पत्ति, दोनों मनुष्य के ही हाथ में रहनी चाहिए। क्रान्ति जनता के लिए है तो जनता के हाथ में रहनी चाहिए। लेकिन यह

www.vinoba.in

तब होगा जब क्रान्ति जनता की शक्ति से होगी, बन्दूक की शक्ति से नहीं। यही कारण है कि ग्रामदान ने गाँव की विद्रोह-शक्ति में भरोसा किया है। गाँव का विद्रोह उसके सामूहिक निर्णय में है। जब हमारी आँखों के सामने गाँव-के-गाँव ग्रामदान में शरीक हो रहे हैं तो हम क्यों मानें, कैसे मानें, कि गाँव क्रान्ति-विरोधी है? नक्सालवादी मानता है कि खेत का किसान और खेतिहर मजदूर तो क्रान्तिकारी हैं लेकिन बाकी सब क्रान्ति-विरोधी हैं। हम खेत के किसान और खेतिहर मजदूर को दूसरे मनुष्यों से अलग क्यों करते हैं? हम क्रान्ति का दरवाजा सबके लिए खुला क्यों नहीं रखते? किसीके लिए भी बन्द क्यों करते हैं? क्या यह बात नहीं है कि जमाना बदला है तो मनुष्य भी बदला है? मनुष्य के पास पूँजी हो तो वह क्रान्ति-विरोधी है और पूँजी न हो तो क्रान्तिकारी है, यह तर्क पुराना है। पूँजी भले ही शरारत करती हो, लेकिन उसके कारण मनुष्य क्यों मारा जाय? समस्या यह है कि पूँजी को समाज का अहित करने से कैसे रोका जाय?

जो भरोसा नक्सालवादी को बन्दूक में है वही भरोसा फासिस्टवादी को भी है। दोनों को एक ही भरोसा क्यों है? क्या फासिस्टवादी भी क्रान्तिकारी है? हम जानते हैं कि जब बन्दूक का शासन होगा तो वह थोड़े लोगों का ही शासन होगा, नाम हम चाहे जो उसे दें। फासिस्टवाद और नक्सालवाद, दोनों हा से शासक और सैनिक की ही शक्ति बढ़ती है। भूमिहीन को एक टुकड़ा जमीन देना, और बदले में उसकी छाती पर अपनी बन्दूक रखकर हुकूमत करना—यह भी कोई क्रान्ति है! क्या जमाने के साथ-साथ क्रान्ति की पद्धति नहीं बदलेगी?

ग्रामदान को भूमिहीन और गरीब उतने ही प्रिय हैं जितना नक्सालवादी को। ग्रामदान ऐसे ग्रामीण जीवन की कल्पना करता है जिसमें क्रान्ति का शुभारम्भ इससे होता है कि भूमि गाँव की हो, खेती खेतिहर की हो, रोटी और रोजी सबकी हो। गाँव के जीवन में सरकार का हस्तक्षेप न हो; गाँव पर किसी बाहरी का नेतृत्व न हो। ऐसी व्यवस्था में न बन्दूक का दमन रहेगा, न थैली का शोषण, और न टोपी का नेतृत्व।

ऐसी ही व्यवस्था तो मार्क्स, लेनिन और माओ भी चाहते हैं। क्या नहीं? फिर क्यों मार्क्स-लेनिन-माओ का नाम लेनेवाले क्रान्तिकारियों को भरोसा नहीं होता कि गाँव में जो भी रहते हैं वे सब मनुष्य हैं। उन्हें मनुष्य से अधिक राज्य में भरोसा क्यों होता है? जब एक धनी व्यक्ति साम्यवादी हो सकता है—कितने ही हुए हैं, और आज भी हैं—तो यह सिद्ध है कि बुद्धि तात्कालिक स्वार्थ से ऊपर उठकर स्थायी हित को समझ सकती है। हम इस नयी चेतना का लाभ क्रान्ति के लिए क्यों नहीं उठाते? बुद्धि को ऊपर उठने से दो ही चीजें रोक सकती हैं—एक भय, दूसरी स्वार्थ, अगर हम गाँव के लोगों को आश्वस्त कर सकें कि ऐसी ग्राम-व्यवस्था सम्भव है जिसमें किसीको किसीसे डरने का कारण नहीं, और जिसमें सबका उचित 'स्वार्थ (स्थायी हित) सुरक्षित है, तो कौन है जो परिवर्तन का स्वागत करने से इनकार करेगा? क्यों हम अपनी अनावश्यक शंकाओं से गाँव-गाँव में प्रतिक्रान्ति पैदा करें? जिस देश में गरीबों का इतना प्रबल बहुमत है उसमें क्रान्तिकारी को मुट्ठीभर अमीरों का भय हो, यह इस बात का प्रमाण है कि मार्क्स का नाम लेकर भी क्रान्तिकारी आज की ऐतिहासिक परिस्थिति में क्रान्ति का नया स्वरूप नहीं स्थिर कर पा रहा है। मार्क्सवाद की यह बहुत बड़ी विशेषता है कि उसने बदलती हुई ऐतिहासिक परिस्थिति में क्रान्ति के बदलते हुए स्वरूप की कल्पना की है। फिर क्यों हम आज देश की नयी परिस्थिति में सत्ता और स्वामित्व के स्वरूप के परिवर्तन की नयी पद्धति पर विचार करने से मुँह मोड़ते हैं, और क्रान्ति को बन्दूक की नली में ढूँढ़ने का सौ साल पुराना आग्रह दुहराते जा रहे हैं? माओ ने मजदूर से आगे बढ़कर किसान को क्रान्तिकारी माना जो कभी क्रान्ति का दुश्मन माना जाता था। हम इतना ही कहते थे कि अब जरा नागरिक को क्रान्तिकारी मानकर देख लीजिए। हमारा उद्देश्य क्या है—दमन और शोषण का अन्त या संघर्ष के लिए संघर्ष? संघर्ष से किसकी शक्ति बढ़ती है—'क्रान्तिकारी' की या नागरिक की? क्या हम अब भी नहीं मानते कि जो राज्य कभी संरक्षण का साधन था वह आज कठोर दमन का साधन बन गया है? बन्दूक से इस दमनकारी राज्य की ही शक्ति बढ़ती है। क्या हम यही चाहते हैं? सरकार की शक्ति बन्दूक की शक्ति है, और बन्दूक से हमेशा सरकार की ही शक्ति बनती है। एक बार हम नागरिक की शान्तिपूर्ण विद्रोह-शक्ति पर भरोसा रखकर देखें तो! ग्रामदान यही देखना चाहता है। क्रान्तिकारी अपनी क्रान्ति में भी क्रान्ति करे, यह जमाने की माँग है। पुरानी क्रान्ति से नये परिणाम नहीं निकलते दिखाई देते। विज्ञान के जमाने में विचार की शक्ति को स्वीकार करना चाहिए, और अब बन्दूक की शक्ति का भरोसा छोड़ना चाहिए। लेकिन क्या हम बन्दूक को इसीलिए ढोते जायेंगे कि वह परिचित है? हम यह क्यों नहीं सोचते कि वह पुरानी पड़ गयी, इसलिए अब छोड़ देने लायक है?

ग्रामदान गाँव को ही क्रान्तिकारी बनाना चाहता है। नक्सालवादी गाँव के कुछ लोगों को लेकर क्रान्ति की शक्ति बनाना चाहता है। यह स्पष्ट है कि अगर गाँव क्रान्तिकारी नहीं बनेगा तो क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति के संघर्ष में पड़ जायगा। उससे गृहयुद्ध का जन्म होगा, क्रान्ति का नहीं। इतना मान्य है कि क्रान्ति में देर नहीं होनी चाहिए। देर होगी तो ग्रामदान और नक्सालवाद, दोनों की हार होगी। अगर क्रान्ति 'कुछ' की बन्दूक का भरोसा करेगी तो भारत बन्दूक का गुलाम होगा। कौन जानता है कि वह बन्दूक साम्यवादी होगी या फासिस्टवादी? अगर 'गाँव' की जीत हुई तो भारत दुनिया को एक नयी चीज दे सकेगा। क्रान्ति मजदूर को देख चुकी, किसान को देख चुकी, पार्टियों को देख चुकी, अब उसे गाँव को देखना चाहिए। भारत में गाँव ही जनता है। जनता की ही शक्ति क्रान्ति की शक्ति है।•

उन्होंने शिक्षा को पक्षपात की प्रवृत्तियों से बचाया

www.vinoba.in

जयप्रकाश नारायण

"मैं शायद यह गुस्ताखी की बात कहने के लिए माफ कर दिया जाऊँगा कि इस ऊँचे ओहदे के लिए मुझे जिन अनेक अनेक वजहों से चुना गया, उनमें से एक खास वजह यह है कि मेरा ताल्लुक अपने मुल्क के लोगों की तालीम से रहा है।" ये उद्‌गार भारत के तीसरे राष्ट्रपति ने अपने प्रारम्भिक भाषण के दौरान जाहिर किये थे।

यह एक अनोखी बात है कि जब डा० जाकिर हुसैन को मुल्क के सबसे ऊँचे ओहदे के लिए चुना गया तो उन्होंने अपना हवाला एक शिक्षक के रूप में दिया। वे जानते थे कि पिछले २० वर्षों में मुल्क में शिक्षकों का पेशा सत्ता की खींचातानी के कारण अपनी इज्जत खो चुका था। लेकिन डा० जाकिर हुसैन के लिए शिक्षा का पेशा उनकी जिन्दगी थी। इसलिए नहीं कि उन्हींके शब्दों में वे भी "सियासी आसमान के चमकदार सितारे की तरह चमक नहीं सकते थे", बल्कि इसलिए कि "शिक्षा राष्ट्रीय उद्देश्य-सिद्धि का प्रधान औजार है।" और, मुल्क की शिक्षा का गुण राष्ट्र के गुण के साथ अविभाज्य रूप में जुड़ा हुआ है यह बात डाक्टर जाकिर हुसैन ने अपने उद्‌घाटन-भाषण में ही कही थी।

अफसोस की बात है कि इस देश की शिक्षा सरकार की इस हद तक आश्रित हो गयी है कि वह राष्ट्रीय उद्देश्य नहीं, बल्कि राजनीति का औजार बन गयी है। और, जैसे-जैसे मुल्क की राजनीति तेजी से ढलान की ओर फिसलती जा रही है वैसे-वैसे शिक्षा भी गिरती जा रही है।

आजादी की लड़ाई के दिनों में ऐसी हालत नहीं थी। यह दुर्भाग्य है कि आजादी की लड़ाई के दिनों में सामने आनेवाली चुनौतियों के मुकाबिले के लिए लोगों में जिस ढंग की निःस्वार्थ सेवा, सबकी मिलीजुली कोशिशों और कठिन काम करने की विशेषताओं का दर्शन होता था वह आजादी के बाद नहीं दिखाई पड़ीं। उस जमाने में "राष्ट्रीय शिक्षा" के लिए लोगों द्वारा जगह-जगह जो कोशिशें की गयीं वे अपने आप में नमूना हैं। जामिया मिलिया की मिसाल उस जमाने की कोशिशों का एक प्रशंसनीय उदाहरण है। और जामिया मिलिया की कहानी जैसे डाक्टर जाकिर हुसैन की जिन्दगी की ही कहानी है।

एक नन्हा-सा बीज बढ़ते-बढ़ते बरगद से विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लेता है। आदमी की जिन्दगी में भी ऐसा ही होता है। आदमी के अन्दर एक छोटी-सी चिनगारी है, जो उसे ऊँचे करतब की ओर ले जाती है। अगर आदमी के भीतर वह छोटी-सी चिनगारी न पैदा होती तो वह औरों के लिए अनजान ही बना रह जाता। डा० जाकिर हुसैन के बारे में भी ऐसा ही हुआ।

"मेरी जिन्दगी का वह पहला फैसला था जो मैंने खूब समझ-बूझकर किया था। शायद वही एक फैसला है जो वाकई मैंने कभी अपनी जिन्दगी में लिया है, क्योंकि उसमें से ही मेरी बाद की जिन्दगी का बहाव फूट निकला।" उपरोक्त शब्दों में जाकिर साहब ने अपनी उस जिन्दगी का जिक्र किया है जब उन्होंने अलीगढ़ में एक नवजवान, शिक्षक-छात्र की हैसियत से अपने आपको सभी चीजों से अलग करके असहयोग आन्दोलन में कूद पड़ने का फैसला किया था। असहयोग आन्दोलन सन् १९२० में गांधीजी द्वारा शुरू किया गया पहला राष्ट्रव्यापी आन्दोलन था। ऊपर-ऊपर से ऐसा लगता है कि जाकिर साहब ने बात कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कही है, लेकिन जो लोग उस नव-जागरण के जमाने में मौजूद रहे हैं, और जिन्होंने भावना के जोरदार बहाव में पड़कर नहीं, बल्कि खूब सोच-समझकर और दिल टटोलकर उस जमाने की प्रेरणाओं को अंगीकार किया था, वे ही इन शब्दों का अर्थ समझ पायेंगे।

सन् १९२१ की जनवरी के दिन थे। उन दिनों आत्मा को आलोड़ित करनेवाले असहयोग आन्दोलन की धारा में मैं खुद कूदने की तैयारी कर रहा था, उस समय के अपने निजी अनुभव की बात कहूँ तो कहना चाहिए कि उस जमाने ने मेरे भीतर ऐसी चाभी भर

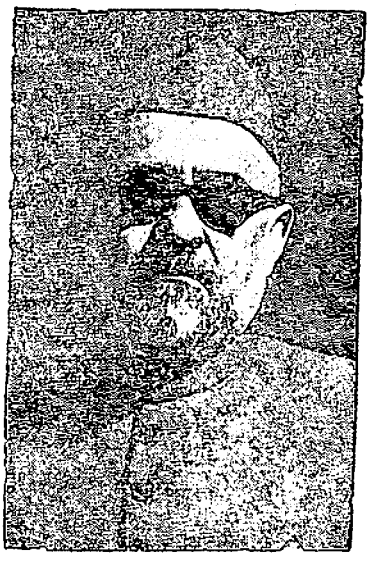

डा० जाकिर हुसैन की महान् आत्मा ईश्वर के पास चली गयी, जहाँ एक दिन सभी प्राणियों को जाना है! —विनोबा

दी जो तब से लेकर आज तक बराबर मुझे आगे बढ़ाती जा रही है।

तो, अलीगढ़ का निर्णय ही वह बीज था, जिससे भारत के तीसरे राष्ट्रपति का आविर्भाव हुआ। उस प्रारम्भिक बीजरूपी निर्णय के अभाव में डा० जाकिर हुसैन शायद अनजान आदमी तो नहीं रहते, लेकिन वे उस जमाने के उन बहुत-से पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानियों में से होते जो आमतौर पर प्रचलित अच्छी आमदनीवाली नौकरियों या पेशे में लगकर संतुष्ट रहते हैं। लेकिन, अपने उस फैसले पर चलते नवजवान जाकिर साहब ने अपनी जिन्दगी को आजादी की लड़ाई, राष्ट्रीय शिक्षा, कुर्बानी, और गरीबी के लिए समर्पित कर दिया।

भारत के तीसरे राष्ट्रपति के चुनाव के समय पहली बार राजनैतिक दलों में आपसी मतभेद पैदा हुआ। उस मतभेद के कारण एक ऐसे पद के लिए पक्षपात की राजनीति का खेल खेलने की नासमझ कोशिश की गयी जिस पद का महत्त्व ही इस बात में है कि वह हर तरह के पक्षपात से ऊपर की चीज है। हालाँकि डा० जाकिर हुसैन की उम्मीदवारी का फैसला चुनाव के जरिए हुआ, लेकिन उनकी पूरी जिन्दगी इस बात का

सबूत है कि वे हमेशा सोच-समझकर हर तरह के पक्षपात से अलग रहे।

www.vmoba.in

डा० जाकिर हुसैन के जीवनी-लेखक श्री ए० जी० नूरानी ने उनकी जिन्दगी के इस पहलू को प्रकाशित करनेवाले कई उदाहरणों का उल्लेख किया है, जैसे कि जामिया मिलिया को कांग्रेस और मुस्लिमलीग के आपसी द्वन्द्व का अखाड़ा बनाने से बचाने की उनकी सफल चेष्टा, अन्तरिम सरकार के बनने पर उनकी उसमें उस समय तक शामिल न होने की हिचकिचाहट जबतक कि मुस्लिम-लीग उसके लिए राजी न हो जाय, और अन्त में अलीगढ़ विश्वविद्यालय के उपकुलपति के चुनाव के समय उनकी यह शर्त कि जब तक अलीगढ़ विश्वविद्यालय की चुनाव-सभा (कोर्ट) उनके पक्ष में सर्वसम्मत प्रस्ताव नहीं करती तबतक वे उपकुलपति का पद स्वीकार नहीं करेंगे।

यह उनकी सफलता का एक प्रमाण था कि उन्होंने शिक्षा को पक्षपात की उत्तेजना से तो अलग रखना, लेकिन राष्ट्रीयता की मूल धारा और आजादी की लड़ाई से नहीं। जामिया की रजत जयन्ती के अवसर पर १७ नवम्बर १९४६ में उन्होंने एक ही मंच पर एक ओर जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आजाद, और दूसरी ओर मुहम्मद अली जिन्ना और लियाकत अली खान जैसे कड़े राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वियों को इकट्ठा करके अपनी सफलता का जीता-जागता प्रमाण प्रस्तुत किया था।

उस दिन डाक्टर जाकिर हुसैन ने जो भाषण दिया था वह जल्दी भुलाने लायक नहीं। वह ऐसा समय था जब कि साम्प्रदायिक दंगों की लहर पूरे देश में फैल रही थी। एक शिक्षक की हैसियत से बोलते हुए उन्होंने कहा था—

"यह आग एक महान राष्ट्र में सुलग रही है। इस आग के रहते हुए उदारता और समझदारी के फूल कैसे खिलेंगे? जानवरों की दुनिया में रहकर आप इनसानियत को कैसे बचायेंगे? यद्यपि ये शब्द बहुत तीखे हैं, लेकिन आज की बिगड़ती हुई हालत में इससे ज्यादा तीखे शब्द भी नरम ही मालूम होंगे। हम लोग जो कि नये लोगों को इज्जत देने का वादा कर चुके हैं, अपने अन्दर महसूस होनेवाली तकलीफ को किस तरह जाहिर करें यह समझ में नहीं आता; जब कि हम देखते हैं कि बेगुनाह और मासूम बच्चे भी इस खौफनाक दहशत के असर से सुरक्षित नहीं हैं। किसी भारतीय कवि ने कहा है कि हरेक बच्चा जो इस दुनिया में आता है वह यह पैगाम लाता है कि खुदा ने अभी तक इनसान का भरोसा नहीं खोया है। लेकिन क्या हमारे मुल्क के लोगों का अपने आप पर से इतना भरोसा उठ गया है कि वे इन कलियों के खिलने के पहले ही उन्हें कुचल देने की ख्वाहिश रखते हैं!"

और तब, विशिष्ट आमंत्रितों को "राजनैतिक आसमान के सितारों" के विशेषण से सम्बोधित करते हुए उन्होंने मन को उद्बोधित करनेवाली आवाज में कहा था—"खुदा के लिए एक जगह बैठिए और नफरत की इस आग को बुझाइए। यह पूछने का समय नहीं है कि इसके लिए कौन जिम्मेदार है और इसके कारण क्या हैं? आग फैलती जा रही है। मेहरबानी करके आप इसे बुझायें। इस समय सवाल यह नहीं है कि किस कौम पर मरने का खतरा मँडरा रहा है और किस पर नहीं। हमें इस बात का चुनाव करना है कि हम सभ्य इनसानी जिन्दगी पसन्द करते हैं या बर्बरता की। खुदा के नाम पर ऐसा न होने दीजिए कि इस मुल्क में सभ्यता की बुनियादें ही नष्ट-भ्रष्ट हो जायें।"

मैंने उनके शब्दों को विस्तार से इसलिए उद्धृत किया है कि उनका सन्देश आज भी तरोताजा है और आज के राजनीति के आकाश के सितारों को भी उनके मानवीय और राष्ट्रीय कर्तव्यों के प्रति सजग रखने की जरूरत है।

जो इतना सक्रिय, सृजनशील, शिष्ट, निर्भय, सत्यवादी, समर्पित और राष्ट्र द्वारा मान्य था, ऐसे आदमी की जिन्दगी की कहानी वस्तुतः सबके लिए प्रकाश और प्रसन्नता का स्रोत है। (मूल अंग्रेजी से)

—श्री ए० जी० नूरानी द्वारा लिखित डा० जाकिर हुसैन की जीवनी की प्रस्तावना।

प्रादेशिक वार्ता

मध्यप्रदेश

• शाजापुर जिला गांधी शताब्दी समारोह के अन्तर्गत संयोजक जिलाध्यक्ष श्री आर० सी० दुबे ने जिले के पाँच विकासखण्डों में ग्रामस्वराज्य शिविर-शृङ्खला के दो दिवसीय शिविर लगाने के कार्यक्रम निश्चित किये हैं।

• छतरपुर जिला गांधी-शताब्दी-समिति और सर्वोदय-मण्डल द्वारा जिले के नौगांव विकासखण्ड में १८ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। यह ज्ञातव्य है कि जिले के ईशानगर विकासखण्ड में पदयात्राओं के पहले दौर में १० ग्रामदान मिले थे।

• इन्दौर से ११ मील दूर, ग्रामदानी गाँव पालिया की जनता द्वारा ग्राम की शराब की दुकान हटाने के लिए १२ अप्रैल से शान्तिपूर्ण सत्याग्रह शुरू किया गया। पालिया की ६० प्रतिशत से भी अधिक जनता द्वारा लगभग १ वर्ष पूर्व शराब-दुकान बन्द कराने के अपने हस्ताक्षर-युक्त माँग-पत्र शासन को प्रस्तुत किया गया था। ग्रामसभा पालिया ने विगत १८ मार्च को मुख्यमंत्रीजी को पत्र लिखकर माँग की थी कि ३१ मार्च से दुकान बन्द कर दी जाय, अन्यथा सत्याग्रह शुरू किया जायगा। अतएव १२ अप्रैल से श्री शंकरलाल मण्डलोई के नेतृत्व में शान्तिपूर्ण सत्याग्रह किया गया। (सप्रेस)

श्रद्धांजलि

सर्व सेवा संघ एवं गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी के सदस्यों की यह सम्मिलित सभा भारत के राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन के आकस्मिक एवं अप्रत्याशित निधन पर अपना हार्दिक शोक प्रकट करती है और दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए कामना करती है! यह सभा राष्ट्रपति के शोक-संतप्त परिवार के साथ संवेदना प्रकट करती है और आशा करती है कि इन दुःखद क्षणों में उन्हें इस शोक को सहन करने की पर्याप्त शक्ति एवं धैर्य मिले। ३ मई, '६९

www.vinoba

भगवत्-प्रेरित काम होकर रहेगा

"माधव ! मोह-फाँस क्यों टूटै,
बाहिर कोटि उपाव करिय, अभ्यंतर ग्रंथि न छूटै ।"

एक साधु पुरुष थे, उनसे पूछा गया कि मोक्ष यानी क्या ? वे संस्कृत नहीं जानते थे। तो उन्होंने कहा, मो यानी मोह और क्ष यानी क्षय। मोह का क्षय यानी मोक्ष। मोह अनेक प्रकार के होते हैं। मोह का एक ही रूप नहीं है। वह तरह-तरह के रूप लेता है। ऐसे रूप लेता है कि लगता है कि मित्र है--लेकिन दुश्मन का काम करता है। जो साफ दुश्मन होता है, उसका तो उतना भय नहीं--समझ सकते हैं कि दुश्मन आया है। लेकिन दोस्त का रूप लेना और अन्दर से दुश्मनी करना अधिक खतरनाक है। दूसरे अनेक प्रकार के विकार हैं, वे प्रकट हैं। द्वेष है, तो वह प्रकट है। लेकिन मोह ऐसी वस्तु है, जो अनेक प्रकार के रूप लेकर आती है।

भगवत्-प्रेरणा को कुछ मिसालें

विचार तो ठीक लगता है, खिचाव दूसरी ओर होता है। यह हालत बहुतों की होती है। इसलिए इस आन्दोलन में कोई दाखिल हुआ, तो हम उसका कोई उपकार नहीं मानते। भगवान ने प्रेरणा दी इसलिए वह दाखिल हुआ। और जो दाखिल नहीं हुए, उन्हें नफरत नहीं करते। वे इसलिए दाखिल नहीं हुए कि भगवान ने उन्हें प्रेरणा नहीं दी। भगवद् प्रेरणा के अलावा दूसरी कोई प्रेरणा दुनिया में काम कर रही है ऐसा बाबा मानता नहीं। कल आंधी आयी। कौन कह सकता था कि आंधी आयेगी। लेकिन आयी और गयी। नुकसान नहीं किया, लेकिन कर भी सकती थी। अब सह्याद्रि बहुत पक्का, मजबूत माना गया था, हिमालय मुलायम माना गया। वहाँ भूकम्प होते हैं। लेकिन कोई यह खयाल नहीं कर सकता था कि सह्याद्रि भी डिगेगा। लेकिन कोयना में भूकंप हुआ। वैज्ञानिक ने कहा कि वहाँ जमीन के अन्दर ८०० मील नीचे पानी है और वह उधर से लेकर केरल तक है। इसका मतलब इतना हिस्सा फ्लोटिंग है। इसलिए एक भगवद् प्रेरणा ही दुनिया में काम करती है, ऐसा बाबा का विश्वास है।

कौन मनुष्य क्या था और उसको प्रेरणा कैसे मिली, इसकी कुछ मिसाल : बाबा ने देखा, एक प्रोफेसर सामान्य व्यक्ति, उसको इच्छा हुई कि भूदान, ग्रामदान का काम करे। उसने अपने काम से इस्तीफा दिया और भूदान-ग्रामदान का काम करना चाहा। मैंने उससे कहा, देखो भैया, अपने प्रान्त में काम मत करो, "ए प्राफेट इज नाट आनर्ड इन हिज ओन कण्ट्री।" तो वह निकल पड़ा उड़ीसा के बाहर। पंजाब में गया, उत्तर-प्रदेश में गया, राजस्थान में गया, गुजरात में गया। सब दूर अलख जगाया। जहाँ-जहाँ पटनायक जाता है, एकदम जनता खड़ी होती है। पटनायक नहीं होता, तो उत्तरप्रदेशवाले संकल्प नहीं करते।

दूसरी मिसाल, प्रोफेसर निर्मला। बाबा का भूदान शुरू हुआ और निर्मला को प्रेरणा

विनोबा

मिली। निर्मला नागपुर में प्रोफेसर थी। उसने सोचा, यह मौका है, निकलना चाहिए, और वह निकल पड़ी। भूदान आरम्भ होकर १८ साल हुए। वह लड़की भी १८ साल से काम कर रही है। और जहाँ भी जाती है, उसका असर हुए बिना नहीं रहता। और कहाँ-कहाँ जाती है ? इधर असम से सौराष्ट्र तक और उधर केरल से गंगोत्री तक। लेकिन जहाँ जाती है, वहाँ आध्यात्मिक भूमिका रख देती है कि इस आन्दोलन का ऊपर का पहलू आर्थिक, मानसिक, सामाजिक है, लेकिन अन्दर से वह आध्यात्मिक है। और, हजारों लोग उसको सुनते हैं। उस लड़की ने जगह-जगह अलख जगाया।

मैंने तो पटनायक को प्रेरणा दी नहीं थी, निर्मला ने मुझसे पूछा नहीं था और इस्तीफा दे दिया और आयी। ऐसे दृष्टान्त अगर मैं दूँ, जो बिलकुल रस्सी काटकर आये हैं, तो ५०-६० तो सहज ही दे सकता हूँ।

"भांत छोड़ी, बन्धु छोड़्यो,
छोड़्या सगा सोई,
अँसुवन जल सींच-सींच
प्रेम बेलि बोयी।
अब तो बात फैल गयी,
जाणे सब कोई,
मीरा प्रभु लगण लागी,
होनी होय सो होई ॥"

इस प्रकार से बिलकुल सब कुछ छोड़कर निकल पड़े हुए लोग, इस आन्दोलन में कई मिलेंगे। और उनको यह प्रेरणा बाबा की दी हुई नहीं है।

हमारे बापी—नवकृष्ण चौधरी। उड़ीसा के मुख्यमंत्री थे। एक दिन अचानक मंत्रीपद छोड़ दिया। उसके पहले मुझसे वे कई दफा मिले थे। लेकिन एक दफा भी मैंने उनसे छोड़ने को सुझाया नहीं था। उनके दिमाग में आया कि छोड़े बिना, रस्सी काटे बिना, मोह छोड़े बिना, लोक-शक्ति का निर्माण नहीं होगा। अशोक के मन में आया और उसने एकदम सारा छोड़ दिया, युद्ध बन्द कर दिया। प्राचीन काल की मिसाल अशोक की, लेकिन नवबाबू की मिसाल कोई कम नहीं है। यह सब मेरे ध्यान में आया और मेरा विश्वास दृढ़ हो गया कि दुनिया में भगवद् प्रेरणा के अलावा दूसरी कोई प्रेरणा काम नहीं करती।

दुनिया में सर्वोदय ही चलेगा

"मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।" अर्जुन को भगवान ने कहा, अर्जुन ! ये सारे मर चुके हैं, मुर्दा हैं, दीखते हैं जिन्दा, लेकिन ये मर चुके हैं—मैं उनको मार चुका हूँ, तू निमित्त मात्र बन, तेरे यश के लिए मैंने यह नाटक किया है। बिलकुल ऐसा ही साक्षात्कार मुझे होता है कि ये सारे मर चुके हैं। हमारा दुश्मन मर चुका है, उसकी हस्ती है नहीं। यह तब ध्यान में आया, जब मैंने देखा कि कम्युनिज्म में बिलकुल दरार पड़ गयी है। एक जमाना था, जब कम्युनिस्ट कहते थे, सारी दुनिया में कम्युनिज्म की स्थापना होगी, हमारा भेद है नहीं। हमारा कार्य तब आरम्भ होगा, जब सब दुनिया में कम्युनिज्म की स्थापना होगी। तब

कार्य समाप्त नहीं होगा, आरम्भ होगा, और हम स्थापना करेंगे, सारी दुनिया में कम्युनिज्म की—लिबरेशन आर्मी भेजकर। लेकिन मजा क्या हुआ ? उसमें दो भाग पड़ गये। इसलिए कि उन्होंने देखा कि यह जो हिंसा-शक्ति है, सैनिक-शक्ति है, वह पतिव्रता नहीं। पतिव्रता एक पति को वरी हुई रहती है। लेकिन हिंसा-शक्ति अमरीका के हाथ में भी जा सकती है। जहाँ कम्युनिज्म नहीं है, वहाँ भी जा सकती है। इसलिए वह व्यभिचारिणी है। उन्होंने यह देखा कि जितनी हिंसा-शक्ति उनके हाथ में है, उससे ज्यादा अमरीका के हाथ में है, तब उनके ध्यान में आया कि हिंसा-शक्ति से यह काम होगा नहीं। यह बात प्रथम रूस के मन में आयी, इस वास्ते उन्होंने सोचा कि हमको अपने देश में उत्तम-से-उत्तम कम्युनिज्म का नमूना दिखाना होगा, न कि हिंसा-शक्ति का। यह उनके मन में साफ हुआ।

लेकिन अभी माओ के मन में यह बात साफ नहीं है। क्योंकि वहाँ ७० करोड़ लोग हैं इसलिए दस-बीस करोड़ मर जायँ, तो कोई हरज नहीं। दीखता ऐसा है, लेकिन एक लेखक ने कहा है कि चीन जैसा सोच-सोचकर कदम डालनेवाला कोई दूसरा देश नहीं है। क्योंकि वह पुराना देश है। जवानों जैसा तुरन्त काम नहीं कर डालता। पाँच-पाँच, छह-छह साल बातें करता रहता है—कहता है, सब्र से काम करो, धीरे-धीरे बातें होंगी। उन्होंने पक्का निश्चय कर लिया है कि बार्डर को पक्का करना है, बाकी काम धीरे-धीरे। बातें खूब करता है। वह 'पेपर टायगर' है। बोलता है, धमकाता है, लेकिन करता कुछ नहीं। उसके नजदीक एक छोटा-सा द्वीप है पोर्तुगीजों के कब्जे में, उस पर हमला करके उसको कब्जे में करना चीन के लिए अत्यंत आसान है। लेकिन अगर वह वैसा करेगा, तो अमरीका उसमें पड़ेगा। इस वास्ते वह चुप है। और आपने पोर्तुगीजों को हटा दिया गोवा से, तो चीन ने एकदम धन्यवाद दिया आपको, कि आपने अच्छा काम किया—यह उपनिवेशवाद (कलोनिएलिज्म) बढ़ रहा है दुनिया में, उसके खिलाफ आपने काम किया। चीन से पूछा जाय कि तुम क्यों नहीं हटाते हो पोर्तुगीजों को तो कहेगा, अमरीका बीच में पड़ेगा। इस वास्ते मैं कह रहा हूँ, चीन में जो ताकतें (फोर्सेस) काम कर रही हैं, वे दीखती हैं प्रतिकूल, लेकिन वे खतरा उठाकर काम नहीं करेंगे। उनका कोई भय नहीं। रूस के बारे में दरार पड़ गयी तब मैं समझ गया कि दुनिया में कोई चीज चलनेवाली है तो सर्वोदय है। कम्युनिज्म का सैद्धांतिक (आयडियालाजिकल) मुकाबिला कर सके, ऐसी दूसरी चीज जो सारी दुनिया को स्पर्श करती है, वह है सर्वोदय।

जिलादान के बाद क्या ?

(राज्यदान के सन्दर्भ में लोकशक्ति का विकास)

नया कदम : नये आयाम

उत्तरित भी, अनुत्तरित भी

१. 'जिलादान के बाद क्या ?' का प्रश्न उत्तरित भी है, और अनुत्तरित भी। उत्तरित इस अर्थ में है कि जिलादान के बाद राज्यदान है। राज्यदान के होने तक मंजिलें चाहे जितनी हों, लेकिन मुकाम एक ही है—राज्यदान। आन्दोलन की व्यूह-रचना की दृष्टि से ग्रामदान से राज्यदान तक का रास्ता साफ और सीधा है, बीच में रुककर पीछे देखने की न जरूरत है और न गुंजाइश।

यह प्रश्न अनुत्तरित इस अर्थ में है कि ज्यों-ज्यों राज्यदान करीब आता जाता है ग्रामदान पीछे पड़ने लगता है, और लोगों का ध्यान बार-बार आगे की ओर जाने लगता है। यद्यपि यह हमेशा स्पष्ट रहा है कि ग्रामदान पूर्वार्द्ध है, और ग्रामस्वराज्य उसी प्रक्रिया का उत्तरार्द्ध, फिर भी ग्रामस्वराज्य ग्रामदान से राज्यदान तक के सीधे रास्ते पर नहीं है। ग्रामस्वराज्य में संख्या से अधिक महत्त्व शक्ति का है। ग्रामदान में जनता का संकल्प है, ग्रामस्वराज्य में वह संकल्प-शक्ति के रूप में प्रकट होता है; और नये सामाजिक संगठन का आधार बनता है। ग्रामदान कार्यकर्ता के कहने से भी हो सकता है, लेकिन ग्रामस्वराज्य में ऐसा कुछ है ही नहीं, जो गाँव की जनता के मिलकर किये बिना हो सके। ग्रामस्वराज्य स्वाश्रयिता का अभ्यास है, और मुक्ति की दिशा में आरोहण की प्रक्रिया है।

यों तो ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य, दोनों में लोकशिक्षण का तत्त्व समान है, फिर भी ग्रामस्वराज्य में संगठन का तत्त्व प्रमुख है, इसलिए उसकी पद्धति और व्यूह-रचना काफी नयी हो जाती है। क्या कार्यकर्ता साथियों को, और क्या जनता को, ग्रामस्वराज्य का ग्राम→

सर्वोदय के लिए सप्ताह में एक समय का भोजन छोड़ें

कल की बात। मैं विद्यासागर से कह रहा था, आपका पैसा इतना विशाल है कि किसी बैंक में रख नहीं सकते। इसलिए वह हर घर में रखा है। हर घर में आपका पैसा है। "स्वयमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते, स्वं वसते, स्वं ददाति च"—बाबा अपना खाता है, अपना पहनता है। इच्छा हुई तो यहाँ की चीज उठाकर दे देगा। और पूछेंगे कि किसका दिया, तो कहेगा अपना ही दिया। कल मैंने एक मिसाल दी। एक जगह बच्चों ने और शिक्षकों ने मिलकर हमें अपनी जेब-खर्च तथा अपने तनख्वाह से थोड़ा-थोड़ा निकालकर कुछ पैसा दिया। वह उत्तम दक्षिणा है, मामूली दान नहीं। तब मैंने उनसे कहा, जो मैं पहले भी कई दफा कह चुका हूँ कि इससे भी उत्तम दान देने का तरीका है—हफ्ते में एक खाना छोड़ो। एक समय के भोजन का खर्च औसत ८ आना आता होगा। हफ्ते में हम २१ बार खाना लेते हैं। उसमें से एक खाना छोड़ना यानी साल भर में २६ रुपये होंगे। उतना सर्वोदय के काम के लिए दान दें। उससे आपका आरोग्य भी सुधरेगा और राष्ट्रसेवा भी होगी। हिन्दुस्तान में ५० करोड़ लोग हैं। मान लें, २५ करोड़ लोग इस प्रकार हफ्ते में एक खाना छोड़ते हैं तो कुल ६५० करोड़ रुपये इकट्ठे होंगे। यह मेरा विचार आज का नहीं, ८ साल पहले कह चुका हूँ। यह सुनकर जर्मनी की स्टुटगार्ड की युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों ने सोचा कि बात अच्छी है, बाबा वहाँ गरीबों के उत्थान का काम कर रहा है और उपाय भी ऐसा बताया है कि हमें भी लाभदायी है। तो उन्होंने उस तरह→

→दान के बाद सहज रूप से निकलता हुआ नहीं दिखाई देता। ग्रामस्वराज्य का शब्द नया, उसका स्वरूप नया, उसकी योजना और कार्यपद्धति नयी, इतने नयेपन के कारण 'जिलादान के बाद क्या ?' प्रश्न वस्तुतः अनुत्तरित रह जाता है। इस स्थिति के कारण जो कार्यकर्ता सोचने-समझनेवाले हैं, वे भी खोये-खोये-से लगने लगते हैं, और जो नागरिक चेतन हैं, उन्हें शंका और अनास्था घेरने लगती है। जिलादानी क्षेत्रों में जाने से आन्दोलन में गिरावट (डिप्रेशन) की स्पष्ट अनुभूति होती है, और ऐसा लगता है कि इस गिरावट को रोकना, और लोकचेतना में ग्रामस्वराज्य की नयी स्फूर्ति पैदा करना हमारा पहला काम है।

ग्रामदान में आगे की बात

२. प्रश्न है : 'यह काम कैसे हो ?' यह सही है कि तूफान में ग्रामदान पक्के हुए हैं, कच्चे हुए हैं, मिले-जुले हुए हैं, और बिलकुल नहीं हुए हैं। साथ ही यह भी सही है कि आज तक सम्पर्क और शिक्षण का जो काम हुआ है, उससे ग्रामदान की गूँज वातावरण में फैल गयी है। आम तौर पर लोग जानने लगे हैं कि ग्रामदान क्या चाहता है। ग्रामदान का असर एक-एक गाँव में भले ही न दिखाई दे, लेकिन आम हवा में है, और फैल रहा है। कुल मिलाकर एक ऐसी मनोवैज्ञानिक स्थिति बनती जा रही है, जिसमें हम ग्रामदान से आगे ग्रामस्वराज्य की दिशा में, अगला कदम उठा सकते हैं। अब समय नहीं है कि ग्रामदान की किसी अपूर्णता का बोझ मन पर रखा जाय। ग्रामस्वराज्य में लोकशक्ति का जो चित्र और आवाहन है, वह अपने में इतना शक्तिशाली है कि ग्रामदान को ज्यों-का-त्यों समेटकर आगे बढ़ सकता है। इसलिए जरूरत है संगठित होकर जनता के सामने ग्रामस्वराज्य को प्रस्तुत करने की, न कि बैठकर ग्रामदान की शव-परीक्षा करने या गणित की तराजू में उसे तौलने की। अगर हम वैसा करेंगे तो नाहक दूसरे की आलोचना और साथियों की अनास्था के शिकार होंगे।

विकल्प की भूख

३. ग्रामदान के तूफान में हमने गाँववालों से बहुत कुछ कहा है, फिर भी अभी बहुत कहने को बाकी है। ग्रामदान के विराट् दर्शन के बिखरे विचार-मोतियों को पिरोकर हमने अभी ग्रामस्वराज्य की माला नहीं बनायी है। आन्दोलन का विषय बनाने को कौन कहे, ग्रामस्वराज्य अभी दूर की एक धीमी आवाज ही है। ऐसे साथियों और नागरिक मित्रों की संख्या कितनी होगी, जिन्हें ग्रामस्वराज्य के सत्त्व-स्वायत्त ग्रामसभा, दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व, ग्रामाभिमुख अर्थनीति, पुलिस-अदालत-निरपेक्ष व्यवस्था, स्वतंत्र शिक्षण और सर्व-धर्म समभाव अच्छी तरह मालूम होंगे ? ग्रामदान के चेतन-से-चेतन गाँवों में चले जाइए, लोग ग्रामस्वराज्य के बारे में या तो अनभिज्ञ हैं, या अस्पष्ट। यह स्थिति जल्द-से जल्द दूर होनी चाहिए। मध्यावधि चुनाव में सबसे अच्छे उम्मीदवार का नारा लेकर हमने जो थोड़ा काम किया, उसका तत्काल भले ही कोई स्पष्ट प्रभाव न हुआ हो, लेकिन इतना तो हुआ दिखाई देता है कि आन्दोलन को प्रतिष्ठा मिली है, और लोगों में यह आशा और अपेक्षा जगी है कि सर्वोदय आज की राजनीति का कोई सुन्दर विकल्प सुझायेगा। लोग दल, ब्लाक, कोआपरेटिव और पंचायत, सबका विकल्प चाहते हैं। ग्रामस्वराज्य वह विकल्प है, और स्वायत्त ग्रामसभा उसकी बुनियादी इकाई, यह बताने—बताने ही नहीं, घोषणा करने का समय आ गया है। दलमुक्त-ग्राम-प्रतिनिधित्व कोरी कल्पना नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक योजना है, जिसकी परीक्षा का वर्ष १९७२ बहुत करीब है, यह कहने की शुरुआत अभी नहीं तो कब होगी ?

यह सम्भव है कि जिलादान के बाद राज्यदान के काम में बाधा न डालते हुए जिलादानी क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य के शिक्षण और संगठन के काम में शक्ति लगायी जा सके। हम जानते हैं कि हममें समग्रता जितनी चाहिए, उतनी नहीं है। एकसाथ एक से अधिक मोर्चों पर शक्ति लगाना प्रायः कठिन होता है, लेकिन हमें अपनी शक्ति का संयोजन करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, क्या कारण है कि उत्तर बिहार के ६ जिले, जिनकी कुल संख्या २॥ करोड़ से कम न होगी, बिहारदान की प्रतीक्षा करते बैठे रहें ? उलटे, अगर उनमें कुछ नयी हलचल दिखाई देती तो दक्षिण बिहार के काम पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ा होता। और, जो काम राज्यदान के तुरन्त बाद करना है उसे अभी से हाथ में लिया जा सके तो आन्दोलन के दो चरणों (फेज) के बीच में जो रिक्तता (वैकुअम) आ जाती है, और आन्दोलन को कमजोर करती है, उससे हम बच जायेंगे। इसके अलावा अबतक हमारा आन्दोलन समाज की चेतना को जिन बिन्दुओं पर छू सका है, उससे अधिक बिन्दुओं पर छू सकेगा।

अभयदान

४. यह सारा काम सुनियोजित लोकशिक्षण का है। शिक्षण द्वारा इस समय ग्रामस्वराज्य के तीन पहलुओं पर सबसे अधिक जोर देने की जरूरत है। (क) ग्रामस्वराज्य मूलतः स्वाश्रयिता (सेल्फ-रिलायेंस) का आन्दोलन है। गाँव में सरकार नहीं, सहकार : यह सामान्य भाषा में इसका मंत्र है।

→हफ्ते में एक खाना छोड़कर जो पैसा इकट्ठा हुआ हमें भेजना शुरू किया। वह पैसा बराबर हमारे पास आता है, और उसका उपयोग भी अच्छे काम में हो रहा है। उसका कारण यह है कि 'ए प्राफेट इज नाट आनर्ड इन हिज ओन कंट्री।" हिन्दुस्तान में बाबा ने यह विचार कहा और जर्मनी—इतनी दूर वहाँ के विद्यार्थियों ने वहाँ अमल करना शुरू किया।

इसमें दो प्रकार के लाभ हैं। गरीबों के हित के काम में आपका सहयोग होगा और आरोग्य सुधरेगा। इसके अलावा एक तीसरा लाभ भी है—वह आध्यात्मिक है—प्रसन्नता होगी, संयम आयेगा। तो, त्रिवेणी संगम होगा। लेकिन यह तीसरा लाभ मैंने गुप्त रखा था, क्योंकि सरस्वती गुप्त रहती है।

यह अगर एक बार लगे कि हमारी चारों ओर—ऊपर, नीचे, दायें, बायें, सामने, पीछे—भगवान ही प्रेरणा दे रहा है, तो काम होकर रहेगा और हम निमित्त मात्र हैं ऐसा अनुभव आयेगा। जो निमित्त मात्र बनना चाहते हैं, उनको शून्य बनना चाहिए—अहंकार-शून्य। जो शून्य बनता है, वह अनन्त बनता है।

[कार्यकर्ताओं के बीच दिया गया भाषण : १८-४-'६९, पटना।]

www.vinoba.in

यह स्वाश्रयिता खाने-कपड़े तक सीमित नहीं है, बल्कि पूरी ग्राम-व्यवस्था इसके अन्तर्गत आ जाती है। इसीलिए तो स्वायत्त ग्रामसभा की बात है। (ख) ग्राम-स्वराज्य में मालिक, महाजन, मजदूर, सबको 'अभयदान' है—हाँ, मालिक और महाजन को भी। हमारा आन्दोलन किसी वर्ग-विशेष का नहीं, 'सर्व' का आन्दोलन है, जिसमें एकांगी हितों को लेकर संघर्ष की गुंजाइश नहीं है। अगर हम 'सर्व' को छोड़ दें, तो आन्दोलन में रह क्या जाता है? (ग) नयी ग्राम-व्यवस्था के अंतर्गत बढ़ते हुए उत्पादन में मजदूर सामान्य मजदूरी के अलावा समुचित भाग का अधिकारी है।

हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि अब-तक हम न मालिक-महाजन को आश्वस्त कर सके हैं, और न मजदूर को आशान्वित। यह हम कब करेंगे? इसको किये बिना हम समाज की उस रचनात्मक चेतना और सहकार-शक्ति को कैसे जगा सकेंगे, जो ग्राम-स्वराज्य के सारे कार्यक्रम के लिए अनिवार्य है? पूँजी-पति के प्रश्न को लेकर स्वयं हमारे चेतन कार्यकर्ता साथियों के मन में तरह-तरह की शंकाएँ रहती हैं, इसलिए चेतन ग्रामीणों के मन में भी तरह-तरह के भय बने हुए हैं। कारण कि हमने उन्हें नहीं बताया है कि ग्राम-स्वराज्य में ये भय निराधार हैं, क्योंकि गाँव को पूँजीपति की पूँजी और प्रतिभा दोनों की जरूरत है, और उसका उचित मुनाफा ग्रामसभा के हाथों में ज्यादा सुरक्षित है। हमने ग्रामदान की वह अर्थ-नीति नहीं स्पष्ट की है, जिसमें मालिक, मजदूर, महाजन परस्पर-मारक न होकर, पूरक हो सकते हैं; जिसमें ग्रामहित की दृष्टि से पूँजीपति को सम्मान दिया जाता है और उसकी पूँजी का उपयोग किया जा सकता है। परिणाम यह हो रहा है कि ग्रामदान के बाद के कामों, जैसे पुष्टि और ग्रामसभा के संगठन आदि, के लिए उनके कदम नहीं उठ रहे हैं। जब उनके नहीं उठ रहे हैं तो मजदूर के कैसे उठें? मजदूर तो निराशा और अविश्वास के समुद्र में डूबा ही हुआ है।

भिन्न धरातल

५. ग्रामसभा के संगठन में हमारे सामने सबसे बड़ा प्रश्न गाँव की एकता (इण्टीग्रेशन), और ग्रामीणों के प्रमाद (इनर्शिया) का है। 'एक गाँव एक हित' के नये नारे पर गाँव को—वर्गगत शोषण और जातिगत दमन के ताने-बाने से बने गाँव को—एक करना कठिन काम है। लेकिन अगर यह कठिन काम न हुआ, और जल्द न हुआ, तो ग्रामस्वराज्य की नींव कैसे पड़ेगी?

इतने वर्षों का अनुभव बता रहा है कि गाँव अपनी भीतरी शक्ति बहुत हद तक खो चुका है। सहकार की शक्ति भी खो चुका है, और प्रतिकार की शक्ति भी खो चुका है। ऐसी स्थिति में हमें गाँव के बाहर के बड़े क्षेत्र की शक्ति से गाँव की समस्याओं को हल करने और उसकी अपनी शक्ति विकसित करने की कला सीखनी पड़ेगी। जिस धरातल पर समस्या पैदा होती है, उससे भिन्न धरातल पर उसका समाधान होता है। अभी तक हमने इतना ही किया है कि ग्रामदान के लिए गाँव की सम्मति प्राप्त कर ली है। सम्मति से संकल्प, संकल्प से शक्ति, शक्ति से संगठन, और संगठन से स्वराज्य तक की सारी सीढ़ियाँ चढ़ने को बाकी हैं। समाज-परिवर्तन की सारी डायनेमिक्स का शुभारम्भ मात्र हुआ है। उसका विकास होना शेष है। आरोहण में सीढ़ियाँ तो कितनी ही हैं, लेकिन फिलहाल ग्राम-स्वराज्य काफी है। ग्रामदान की सम-स्याएँ ग्राम-स्वराज्य के ही धरातल पर हल होंगी।

सन् १९७२

६. जहाँ शक्ति का प्रश्न आता है, वहाँ अवधि का प्रश्न आ ही जाता है। निर्धारित अवधि के बाद शक्ति शक्ति नहीं रह जाती। हमारे सामने अवधि १९७२ है। स्वायत्त ग्रामसभाएँ १९७२ के पहले, दलमुक्त राज्य-व्यवस्था १९७२ में; सेवानिष्ठ, सत्ता-निरपेक्ष, लोकसेवकों का भाईचारा आज से ही; यह हो सकता है ग्रामस्वराज्य के पहले चरण का टाइम-टेबुल। लोक-शक्ति लोक-नीति में किस तरह परिणत होगी, किस तरह ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि विधानसभा में जायेंगे और किस तरह सरकार बनेगी, आदि विषयों की मोटी रूपरेखा 'ग्रामस्वराज्य' पुस्तिका में दी हुई है। उसे गाँव-गाँव में पहुँचाना चाहिए, ताकि लोगों में मंथन हो, चिन्तन हो, और समाज की चेतना में लोक-नीति के सही स्वरूप का प्रवेश हो। आज भी परिस्थिति से निराश लोकमानस लोकनीति के लिए तैयार है। लोकनीति के सिवा दूसरा कोई नारा नहीं है, जो उसमें प्रेरणा भर सके—न किसी राजनीति का और न रचनात्मक कार्यक्रम का। यह याद रखने की बात है कि अगर हम १९७२ में भी चूक गये तो विनोबाजी के शब्दों में 'इतिहास हमें राइट-ऑफ कर देगा।'

विकास

७. एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न विकास (डेवलप-मेण्ट) का है। उजड़ा देश विकास के लिए भूखा है, और कार्यकर्ता भी कुछ करने-देखने को उत्सुक रहते हैं। इस वक्त कई सघन-क्षेत्रों में विकास के कुछ काम हो भी रहे हैं। हम महसूस करते हैं कि सर्वोदय की भूमिका में विकास की एक नयी डायनेमिक्स विकसित होनी चाहिए, जो यह सिद्ध कर सके कि 'अन्तिम व्यक्ति' को छोड़े बिना गाँव का अधिक विकास हो सकता है, जो यह बता सके कि वर्ग-संघर्ष के बिना सामाजिक न्याय की स्थापना हो सकती है? जो इस बात का जीवित प्रमाण बन सके कि ग्रामदान का ग्राम-स्वामित्व वास्तव में 'व्यावहारिक अमानतदारी' (ट्रस्टीशिप इन ऐक्शन) ही है, जिसमें मनुष्य की प्रेरणाओं के लिए भरपूर अवसर है, वासनाओं पर सामूहिक अंकुश है तथा सबके लिए समाज का संरक्षण है। इन गुणों के बिना विकास विकास कैसे माना जायगा? वह विकास शिक्षण और संगठन की निष्पत्ति (बाई प्रोडक्ट) के रूप में होगा।

यह तभी हो सकता है, जब ग्रामकोष इकट्ठा हो और ग्रामसभा द्वारा गाँव अपने साधनों का संयोजन करे। बाहर की सहायता के बहिष्कार का प्रश्न नहीं है। वह आये, और जरूर आये; प्रश्न इतना ही है कि पूरक बनकर आये। अभी शायद ऐसा नहीं हो रहा है। जबतक ऐसा नहीं होता, तबतक हम यह नहीं कह सकते कि विकास हो रहा है; ज्यादा-से-ज्यादा यही कह सकते हैं कि कुछ काम हो रहा है। और, हमने कब माना कि केवल काम हमारा काम है?

नया अभियान

www.vinoba.in

८. अगर परिस्थिति की वह परख सही हो तो ग्राम-स्वराज्य की पूर्वतैयारी के रूप में ये कदम जल्द उठाये जा सकते हैं :

(१) शिविर-अभियान

जिस तत्परता के साथ प्राप्ति का अभियान चलाते हैं, उसी तरह हमें चेतन कार्यकर्ताओं तथा नागरिकों के सम्मिलित 'ग्राम-स्वराज्य-शिविरों' का अभियान शुरू करना चाहिए—पहले राज्यस्तरीय, फिर जिला-स्तरीय और ब्लाकस्तरीय भी। अभी तक प्राप्त सूचना के अनुसार राजस्थान और बिहार में यह क्रम शुरू हो गया है, और कुछ शिविर हो भी चुके हैं।

इन शिविरों में विशेष रूप से 'ग्राम-स्वराज्य' पुस्तिका को आधार मानकर चर्चा की जाय। चर्चा के बाद ग्राम-स्वराज्य की योजना कार्यान्वित करने के लिए स्थानीय मित्रों का आवाहन किया जाय। अनुभव आ रहा है कि मित्र मिलेंगे।

(२) त्रिविध कार्यक्रम के प्रयोग-क्षेत्र

जिन जिलों का दान हो चुका है, उनमें त्रिविध कार्यक्रम के सघन प्रयोग के लिए क्षेत्र चुने जायँ। हर क्षेत्र में धुरी के रूप में कोई एक समर्थ साथी बैठे, जो स्थानीय शक्ति को प्रेरित कर सके। उसे 'प्रखण्ड-सेवक' कहा जा सकता है। अगर वह संस्था का कार्यकर्ता हो तो संस्था उसे रोजमर्रा की जिम्मेदारियों से मुक्त करे।

इन क्षेत्रों में अभियान-पद्धति से त्रिविध कार्यक्रम शुरू किया जाय। ग्रामसभाओं का संगठन, ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति, आचार्य-कुल, तरुण शान्ति-सेना, ग्राम शान्ति-सेना, पंचायतस्तरीय शिविर, सर्वोदय-मित्र आदि कार्यक्रम सम्मिलित शक्ति से एक साथ लिये जायँ।

बिहार और बलिया में इस योजना की शुरुआत हो गयी है। बिहार के लगभग तीन दर्जन मित्र इस तरह काम करने के लिए तैयार हुए हैं।

(३) नयी श्रेणी :

- जिन कार्यकर्ताओं की पहली निष्ठा ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति के प्रति हो, उनकी एक नयी श्रेणी (केडर) बनायी जाय।
- आन्दोलन के वरिष्ठ व्यक्ति इन प्रखंड-सेवकों को अपने सत्परामर्श का लाभ पहुँचायें।
- प्रखण्ड-सेवकों की बैठक अभी दो महीनों में एक बार आमंत्रण पर किसी प्रखण्ड-सेवक के क्षेत्र में हो। बिहार में ऐसी पहली बैठक मध्य जून में होगी।

(४) शहर का काम :

- सुविधानुसार शहरी क्षेत्रों में काम शुरू किया जाय।
- ज्यों ही किसी ब्लाक में तीन-चौथाई ग्रामसभाएँ बन जायँ, उनकी प्रखण्ड-सभा बना ली जाय, और सारा काम उसके तत्वावधान में किया जाय।
- 'गाँव की बात' गाँव-गाँव में पहुँचायी जाय।

(५) प्रचार-साहित्य :

- अखबारों और रेडियो का प्रयोग यथासम्भव ग्राम-स्वराज्य के प्रचार और प्रसार के लिए किया जाय।
- अपनी 'ग्रामदान उप-समिति' ग्राम-स्वराज्य के विभिन्न पहलुओं पर अध्ययन और सरल साहित्य के निर्माण की व्यवस्था करे।

(६) जन-आधार :

कार्यकर्ता भले ही संस्था-आधारित हों, लेकिन कार्य जनाधारित हो। इसके लिए अन्न-संग्रह किया जाय और सर्वोदय-मित्र बनाये जायँ। •

—तिरुपति अधिवेशन में प्रस्तुत सन्दर्भ लेख–२

सर्व सेवा संघ अधिवेशन–२

आन्दोलन के 'तूफान' में 'उफान' का अभाव

आन्दोलन की अभियान और व्यूह-रचना विषयक चर्चा अचर्चित ही पूरी हो गयी। चर्चा प्रारम्भ की थी गोविन्दरावजी ने, समारोप किया निर्मला बहन ने, बीच की रिक्तता पूरी की गयी प्रदेशीय रिपोर्टिंग से, जिसके लिए कार्यक्रम में कोई स्थान नहीं था।

आन्दोलन में प्राप्ति के बाद का प्रश्न पूरे देश के साथियों के सामने अनुत्तरित है। छिटपुट प्रहार हो रहे हैं, लेकिन इस चट्टान में कहीं दरार पड़ती दिखाई नहीं देती। आचार्य राममूर्ति ने इस विषय की चर्चा शायद इस दृष्टि से प्रारम्भ की होगी कि सामूहिक चिंतन से कुछ नयी बातें सामने आयेंगी, लेकिन भाषण को मगन होकर सुनने के बाद किसी ने चर्चा की जरूरत ही नहीं महसूस की। निर्मल भाई ने अपने सबेरे के भाषण में एक मजेदार बात कही थी, कि विचार-शिक्षण साहित्य-पठन से नहीं के बराबर होता है, हमारे गाँवों के लोग श्रवण-प्रधान हैं। इस अधिवेशन में भाग लेनेवालों ने इस बार जाहिर कर दिया कि हम चर्चाओं की चकचक में नहीं पड़ते, हम तो श्रोता हैं, हमारा काम है सिर्फ सुनना।

राममूर्तिजी ने पहले से तैयार किये हुए और अधिवेशन में भाग लेनेवालों को परिपत्रित किये गये विचारणीय मुद्दों पर वक्तव्य देते हुए कहा, "१८ वर्षों के बाद यह आन्दोलन अब हमारी इच्छाओं और निष्ठाओं का ही नहीं रहा, जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का हो गया है। इस मनोवैज्ञानिक स्थिति से लाभ उठाने की स्थिति हमारी है या नहीं, यह चिन्ता का विषय है। ग्राम-स्वराज्य में कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसमें गाँववालों के किये बगैर कुछ हो सकता है। इसलिए राज्यदान होने के बाद और ग्राम-स्वराज्य की स्थिति आने के बीच की रिक्तता अधिक खतरनाक होगी। यह रिक्तता आने न पाये, और राज्यदान के बाद ग्रामस्वराज्य में सहज प्रवेश हो, यह हमारी विशेष चिन्ता, चिन्तन और अभिक्रम का विषय है।"

राममूर्तिजी के बाद जे० पी० ने अपने महत्त्वपूर्ण भाषण में कई ऐसी बातों की ओर ध्यान खींचा, जो आन्दोलन की जीवनी-शक्ति को पुष्ट करने के लिए बहुत ही आवश्यक है। पहले तो उन्होंने आन्ध्रप्रदेश के कार्यकर्ताओं को झकझोरा कि इस प्रदेश का काम धीमा

www.vinoba.in

क्यों है ? उन्होंने कार्यकर्ताओं से इस पर गम्भीरता से विचार करने की जोरदार अपील की। आपने कहा कि "क्रान्ति की तीन शक्तियों की बात कही जाती है—कानून, कत्ल और करुणा की। कानून का जो अनुभव हुआ, उस पर से इस निर्णय पर पहुँचता जा रहा हूँ कि कानून से कुछ सुधार भले ही हो जाय, लेकिन समाज में आमूल क्रान्ति नहीं हो सकती। शेष दो शक्तियों, कत्ल और करुणा में रक्त-क्रान्ति से मेरा कोई नैतिक मतभेद नहीं है, व्यावहारिक भेद है। यह सुनकर शायद आप लोग कुछ चौकेंगे भी, लेकिन मैं इस पर व्यावहारिक पहलू से ही विचार करना चाहता हूँ। प्रत्येक रक्त-क्रान्ति का यह हश्र हुआ कि क्रान्तिकारी जैसी चाहते थे, वे वैसी रचना नहीं कर पाये। रक्त-क्रान्ति से वह हो नहीं सकती। अपने देश में एक हद तक अहिंसक क्रान्ति हुई थी राष्ट्रवादी; आज जो लोकतंत्र कायम है अपने देश में, यह उसीका परिणाम है। जब कि फ्रांस की क्रान्ति से लेकर रूस और चीन तक की क्रान्ति के बाद वहाँ की सत्ता में कहीं भी 'लोक' का कोई स्थान नहीं है, जब कि 'लोक' के ही नाम पर क्रान्ति का उद्घोष हुआ था।...मैं मानता हूँ कि भारत में रक्त-क्रान्ति से अहिंसक क्रान्ति जल्दी होगी...और हो रही है। इसका प्रत्यय हमें इसलिए शीघ्र नहीं हो पाता, क्योंकि अहिंसक क्रान्ति अबतक की ज्ञात क्रान्ति की अवधारणा में एक नयी क्रान्ति है।" जे० पी० ने इस क्रान्ति की मौलिकता और इस युग के संकेत की चर्चा करते हुए कहा, "इस क्रान्ति का क्षेत्र पहले गाँव को ही क्यों माना गया है यह बात यद्यपि आज के शहरी लोगों को समझाना कठिन है, लेकिन विज्ञान की मदद से विकसित अत्याधुनिक विशालकाय औद्योगीकरण और उसकी पेचीदी समाज-रचना के अनुभवों के बाद पश्चिम के लोगों का विकेन्द्रित और छोटी-छोटी इकाइयोंवाले समाज की ओर जिस तीव्रता से झुकाव हो रहा है और सक्रिय चिन्तन चल रहा है, उसका अध्ययन करने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है। युग का यह संकेत इस क्रान्ति का बुनियादी क्षेत्र गाँव को बनाने में निहित है। दूसरी मौलिकता इस क्रान्ति की यह है कि यथास्थिति चाहनेवालों को भी क्रान्तिकारी बनाना है। यानी यह आंशिक नहीं, सम्पूर्ण क्रान्ति है।...जो क्रान्ति सत्ता के साथ जुड़ जाती है, वह सुधारवादी हो जाती है, और इसीलिए मैं साम्यवादी क्रान्ति को सुधारवादी क्रान्ति मानने लगा हूँ। यह क्रान्ति आरोहण की क्रान्ति है, और इसका आधार ग्रामसभा है। नयी क्रान्ति न तो पार्टियों से होगी और न ट्रेड्यूनियनों के द्वारा होगी, बल्कि पूरी जनता के द्वारा होगी।"

अपने भाषण के अन्तिम चरण में जे० पी० ने आन्दोलन की बौद्धिक क्षमता बढ़ाने के लिए उच्च स्तरीय 'समर स्कूल' (ग्रीष्म-कालीन विद्यालय) का सिलसिला शुरू करने पर जोर दिया और दादा धर्माधिकारी से इसका आचार्यत्व करने का निवेदन किया।

आखिरी दिन, २५ अप्रैल को सवेरे अण्णासाहब ने दलमुक्त लोकतंत्र की लोकनीति पर अपना विचार व्यक्त करते हुए दो बातों पर जोर दिया, एक तो नेपाल में जहाँ पंचायती राजव्यवस्था है उसका अध्ययन किया जाय, और उसके अनुभवों के प्रकाश में अपना चिंतन आगे बढ़ाया जाय, दूसरे यह कि भारत के संविधान की रचना के समय गाँव-आधारित लोकतंत्र की बात चर्चा में आयी थी, उसे क्यों नहीं स्वीकार किया गया, उन सारी चर्चाओं और कारणों का अध्ययन करना चाहिए।

इस वक्त की चर्चा का मुख्य विषय था शान्ति-सेना, जिसका आरम्भ शान्ति-सेना मण्डल की ओर से अमरनाथ भाई ने किया। इस अधिवेशन में अखिल भारत शान्ति-सेना मण्डल के मंत्री नारायण देसाई नहीं आये थे।

जैसा कि इस अधिवेशन के शुरू से ही किसी विषय पर चर्चा न करने की परम्परा कायम हो गयी थी, इस चर्चा में भी उसे किसीने तोड़ने की भूल नहीं की; सिर्फ तीन-चार लोगों ने अपने अनुभव और पावन-प्रसंग सुनाये।

यह सारा दृश्य नये अध्यक्ष एस० जगन्नाथन् के भाषण में वेदना बन व्यक्त हुआ। नयी प्रबन्ध समिति की घोषणा करते हुए आपने कहा कि "हमारा संगठन निहायत कमजोर है, सर्व सेवा संघ का ढाँचा बालू की बुनियाद पर खड़ा है।" आपने बड़े ही दर्द के साथ हृदय की त्वरा व्यक्त करते हुए सबसे निवेदन किया कि नीचे की बुनियाद मजबूत करने की चेष्टा करें।

श्री शंकररावजी ने प्रेरक शब्दों में आन्दोलन की स्थूल उपलब्धियों को प्रेरित करनेवाली चेतना जागृत करने पर जोर दिया। आपने कहा कि कार्यकर्ता के जीवन में आरोहण की प्रक्रिया शुरू होनी चाहिए। सम्पूर्ण समाज को अपने संगठन का आधार बनाने और कार्यकर्ताओं में भातृत्व विकसित करने पर भी आपने जोर दिया।

अधिवेशन की आखिरी सभा में संघ का निवेदन श्री सिद्धराज ढड्ढा ने प्रस्तुत किया और बिना किसी प्रकार की चर्चा या संशोधन-सुझाव के स्वीकृत कर लिया गया। सर्व सेवा संघ के नये मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने कार्यकर्ता साथियों से आन्दोलन और संगठन को अधिक शक्ति और सक्रियता से आगे बढ़ाने, ठोस बनाने की अपील की। उसके बाद श्री गोकुल भाई दौ० भट्ट द्वारा प्रस्तुत उत्तराखण्ड के नशाबन्दी आन्दोलन को समर्थन देनेवाला प्रस्ताव भी बिना किसी संशोधन-सुझाव के स्वीकृत हो गया। सर्व सेवा संघ के नये ट्रस्टी मण्डल के सदस्यों की प्रस्तावित नामावलि भी उसी प्रकार स्वीकृत कर ली गयी।

जे० पी० ने तेलंगाना के प्रश्न पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए कहा कि वे किसी अन्तरराज्यीय विवाद में हर्गिज नहीं पड़ना चाहते। आज की अपेक्षा अधिक छोटे-छोटे राज्यों की पुनर्रचना का विचार बिलकुल भिन्न संदर्भ की चीज है, इसे स्पष्ट करते हुए जे० पी० ने कहा कि क्षेत्रीय विवादों को निपटाने के लिए कुछ राष्ट्रीय स्तर के सिद्धान्त निश्चित कर लेने चाहिए।

अधिवेशन के आखिरी भाषण में अध्यक्ष एस० जगन्नाथन् ने जिन राज्यों में आन्दोलन गतिशील नहीं हो सका है, वहाँ आन्दोलन में वेग डालने, बिहार-दान का निश्चित अवधि में संकल्प पूरा करने और तमिलनाडु के तंजौर जिले की चुनौती का सामना करने के लिए अधिक शक्ति संचित करने और सक्रिय होने पर जोर दिया।

...और हरविलास बहन द्वारा अतिथेयों

के प्रति आभार-प्रदर्शन के साथ अधिवेशन समाप्त हुआ।

www.vinoba.in

अधिवेशन तो समाप्त हुआ, लेकिन मन में एक बेचैनी-सी पैदा कर गया। आन्दोलन जब अपनी उपलब्धियों के एक ऊँचे शिखर पर हो, उस समय के इस अधिवेशन में ऐसा क्यों लगा कि मानो भाग लेनेवालों ने किसी विषय पर गम्भीरता से विचार करने से ही इन्कार कर दिया है? एक साथी ने मजाक-मजाक में कहा, "अधिवेशन-हाल में उधर सभा की कार्यवाही चलती थी, इधर प्रतिनिधि लोग बाजार घूमते नजर आते थे!"

यह बात आम होगी, ऐसा नहीं कह सकते। कहीं उस साथी ने किसी को बाजार में देख लिया होगा, और उसके आधार पर ही अधिवेशन के बारे में अपनी धारणा बना ली होगी, लेकिन इसमें से भी उदासीनता स्पष्ट झलकती है।

इस अधिवेशन ने मन में जो प्रतिक्रियाएँ पैदा कीं, उन्हें आन्दोलन के एक सिपाही के नाते मैं सबके सामने रखना चाहता हूँ, इस आशा के साथ कि इस पर व्यापक सहचिंतन शुरू होगा।

(१) अधिवेशन में गिनती करने पर भाग लेनेवालों में प्रत्यक्ष काम में लगे प्रतिनिधियों की संख्या २५ से अधिक नहीं निकली। इसके दो कारण समक्ष में आते हैं—(क) काम में लगे हुए अधिकांश साथियों के लिए मार्ग-व्यय जुटा पाना सम्भव नहीं हो पाया होगा, (ख) जिन प्रदेशों या जिलों में सघन काम हो रहे हैं, वहाँ के लोग प्राप्ति-अभियानों का सिलसिला तोड़कर अधिवेशन में शरीक होने की मनःस्थिति नहीं बना पाये होंगे।

(२) सर्व सेवा संघ के संगठन की बुनियाद प्राथमिक सर्वोदय मण्डल बहुत कम जगह अस्तित्व में हैं। जिला सर्वोदय मण्डल भी बहुत कम बने हैं। जहाँ बने हैं, उनमें भी ठोस कहे जा सकने लायक बहुत कम हैं।

(३) कुछ थोड़े से जिलों में संगठन हैं भी, तो उनका जीवंत सम्पर्क सर्व सेवा संघ से नहीं के बराबर है। इस दिशा में न तो सर्व सेवा संघ की ओर से सक्रियता दिखाई गयी है और न जिलों की ओर से।

(४) शायद आन्दोलन के नवीनतम स्वरूप के साथ सर्व सेवा संघ के वर्तमान ढाँचे का समुचित अनुबन्ध नहीं जुड़ पाया है, और जुड़ने के लिए नये संदर्भ में संगठन-सम्बन्धी अनिवार्य स्पष्टता भी कहीं है नहीं।

(५) बाबा कहते हैं कि 'भगवान हम छोटे लोगों से बड़े काम कराना चाहते हैं।' कहीं ऐसा तो नहीं है कि बड़े काम की विराटता का जो स्वरूप विकसित हो रहा है उसे देखकर हम लोग सहम-से गये हैं, और हमारी चिंतन-धारा ही अवरुद्ध हो गयी है?

(६) अपने प्रदेशीय या अखिलभारतीय सभाओं को देखने पर ऐसा लगता है कि नये लोगों का आना बन्द हो गया है। निस्सन्देह क्षेत्रीय स्तर पर यह अनुभव नहीं होता। क्या प्रदेशीय और राष्ट्रीय स्तर के संगठन में किसी प्रकार की व्याप्त आन्तरिक जड़ता का लक्षण इसे माना जाय?

(७) सर्व सेवा संघ के चालिसगाँव अधिवेशन में हुए निर्णय के अनुसार सन् १९५६ में आन्दोलन को जनाधारित करने के लिए उस समय के संगठन को विसर्जित किया गया। अपेक्षा थी कि संगठन के विसर्जन के बाद जनक्रान्ति की छोर हाथ लगेगी और शक्ति का नया स्रोत फूटेगा। लेकिन कुछ ही दिनों बाद निराशा के ये स्वर जगह-जगह सुनाई पड़ने लगे कि भूदान-समितियों के विसर्जन के बाद सक्षम कार्यकर्ता तो किसी-न-किसी संस्था से चिपक गये और जिनको कहीं कोई स्थान नहीं मिला वे आन्दोलन के कार्यकर्ता बने रहे। इस बात को पूरी तरह स्वीकारना उचित नहीं होगा, लेकिन उक्त सिलसिले को आज भी कायम रखनेवाली मिसालें योग्य-से-योग्य कार्यकर्ता साथी भी पेश करते रहते हैं तो सवाल उठता है कि क्या इस आन्दोलन में समर्पित जीवन की आवश्यकता नहीं है? निश्चय ही एक बार शहीद हो जाने से बहुत अधिक कठिन है शहादत की जिन्दगी जीना, लेकिन इसके बिना भी क्या भविष्य में कोई क्रान्ति सफल होनेवाली है?

(८) कुछ साल पहले के हमारे अधिवेशनों-सम्मेलनों में सूत्र और श्रम-यज्ञ के प्रतीकात्मक कार्यक्रम रखे जाते थे, जिनके कारण वातावरण में परम्परागत सम्मेलनों से भिन्न एक वैचारिक नयापन रहता था, अब तो फावड़ों की जगह फाइलों ने ले ली है, यद्यपि उसमें जितने कागज होते हैं, उनमें से अधिकांश अर्चचित और शायद अनपढ़े ही रह जाते हैं। फावड़े को कायम रखते हुए फाइलों का सिलसिला चले तो उससे अच्छी बात और क्या होगी?

तिरुपति-अधिवेशन ने हमें अपने अन्दर झाँकने की प्रेरणा दी, और इस अवलोकन में जो कुछ दिखाई दिया उसे निःसंकोच साथियों के समक्ष प्रस्तुत करने की मैंने धृष्टता की।

आशा है, आप सब इन पर विचार करेंगे, और अपनी सम्मति भेजेंगे, ताकि जब हम राजगीर में मिलें तो वहाँ मायूसी की छाया नहीं उमंग की लहरें उठती दिखाई दें।

—रामचन्द्र 'राही'

'भूदान-यज्ञ' : नाम-चर्चा

'भूदान-यज्ञ' का नाम बदला जाय, यह सुझाव बार-बार कार्यकर्ता साथियों की ओर से आता रहता था, इसलिए हमने इसकी चर्चा 'भूदान-यज्ञ' में शुरू की। बहुत सारे पत्र आये, बहुत-से सुझाव आये परिवर्तन के पक्ष में भी, विपक्ष में भी। अभी भी हमारे पास कई पत्र पड़े हैं: सिकन्दराबाद (आंध्र) से उत्तमजी ने तथा श्री अ० स० गद्रे ने सुझाया है 'अहिंसक क्रान्ति', रायबरेली के आनन्द प्रियदर्शी ने 'अभियान' सुझाया है। भागलपुर के श्रीधर प्रसाद सिंह ने 'ग्रामदान महायज्ञ', मथुरा के जयंती प्रसाद ने 'ग्रामस्वराज्य सन्देश', बरेली के ओमप्रकाशजी ने 'समग्र-क्रान्ति' सुझाया है। फैजाबाद के सीताराम सिंह और मुरादाबाद के लखीचन्द्र ने 'भूदान-यज्ञ' को कायम रखने की बात लिखी है।

अब हम इस चर्चा को बन्द कर रहे हैं। पाठकों के सुझाव सर्व सेवा संघ के सामने आ गये, अच्छा हुआ। जहाँ तक बाबा की राय मालूम है, उन्होंने पिछले साल इस प्रश्न पर कहा था कि गांधीजी 'हरिजन' में पूरे स्वराज्य की बात लिखते थे, 'भूदान-यज्ञ' में भी पूरे ग्रामस्वराज्य की बात लिखी जा सकती है।

—सम्पादक

www.vinoba.in

* गांधी-शताब्दी कैसे मनायें ? *

★ आर्थिक व राजनैतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण और ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए ग्रामदान-आन्दोलन में योग दें।

★ देश को स्वावलम्बी बनाने और सबको रोजगार देने के लिए खादी, ग्राम और कुटीर-उद्योगों को प्रोत्साहन दें।

★ सभी सम्प्रदायों, वर्गों, भाषावार समूहों में सौहार्द-स्थापना तथा राष्ट्रीय एकता व सुदृढ़ता के लिए शांति-सेना को सशक्त करें।

★ शिविर, विचार-गोष्ठी, पदयात्रा वगैरह में भाग लेकर गांधीजी के संदेश का चिंतन-मनन और प्रसार करें, उसे जीवन में उतारें।

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति),
टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरू, जयपुर-३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

www.vinoba.in

पुस्तक-परिचय

हाथल

(ग्रामदानी गाँव : ग्रामसभा की कार्य-पद्धति और सम्बन्धों का अध्ययन)

शोध-अधिकारी : अवध प्रसाद

प्रकाशक : कुमारप्पा ग्राम-स्वराज्य संस्थान, गोकुल, दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान)

पृष्ठ : ८४, मूल्य : २–२५ ।

७०० वर्षों के अपने इतिहास में हाथल ने अनेक प्रकार के उतार-चढ़ाव देखे। प्राप्त ऐतिहासिक सूत्रों एवं किंवदन्तियों के आधार पर हाथल गाँव (जिला सिरोही, राजस्थान) को बसाने का श्रेय ओझा वंश को है। इस गाँव की जमीन राजा जयसिंह ने रुद्रमाल यज्ञ के सम्पन्न हो जाने पर दक्षिणास्वरूप एवं जीविका के लिए जागीर में दी थी।

इसी हाथल गाँव के निवासी श्री गोकुल-भाई भट्ट हैं, जिनको अपने अदम्य उत्साह एवं व्यक्तिगत त्याग के कारण राजस्थान के स्वतंत्रता-सेनानियों एवं सर्वोदय-आन्दोलन के संचालकों में वरेण्य स्थान प्राप्त है।

इस गाँव की छोटी-छोटी समस्याओं को हल करने के लिए 'खोत' नाम की संस्था ने बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसी खोत के सर्वसम्मत प्रयास से इस गाँव का ग्रामदान हुआ। हर नये काम का, नये विचार का एक अपना आकर्षण होता है। ग्रामदान की हवा ने इस गाँव के लोगों को नयी स्फूर्ति प्रदान की है।

ग्रामदान का नाम लेते ही हम सबका ध्यान स्वामित्व-विसर्जन पर जा टिकता है। वैसे तो इस गाँव में भूमि कभी व्यक्तिगत सम्पत्ति थी ही नहीं। लगान पंचायत लेती थी। लेकिन एक चीज ग्रामदान के बाद विशेष रूप से यहाँ हुई, जो कि इस गाँव के इतिहास में कभी नहीं थी; वह यह कि जमीन पर ब्राह्मणों का ही संयुक्त रूप से अधिकार था, वह ग्रामदान के बाद स्वेच्छा से 'सर्व' के हाथ में चला गया। अब उस गाँव में सभी भूमिवाले हो गये हैं।

इस पुस्तिका में हाथल का सर्वांगीण सर्वेक्षण प्रस्तुत करके गाँव की नयी दिशा क्या हो, यह बताने का बड़ा ही विवेकपूर्ण प्रयास किया गया है।

"कुमारप्पा ग्राम-स्वराज्य संस्थान के शोध-अधिकारी श्री अवध प्रसाद ने हाथल में जाकर वहाँ के लोगों से प्रत्यक्ष सम्पर्क किया और अध्ययन-रिपोर्ट के रूप में इस पुस्तिका को तैयार किया है। इस पुस्तिका से भावी शोधकर्ताओं को प्रश्नावली बनाने एवं सर्वेक्षण की शैली अपनाने में बड़ी सहायता मिलेगी।

८४ पृष्ठों की "हाथल" नामक पुस्तिका में ग्रामदानी गाँव, ग्रामसभा की कार्य-पद्धति और पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन पाँच अध्यायों में संग्रहीत है। अन्त में प्रश्नावली अंकित कर अपने परिश्रम को सार्थक कर दिया गया है।

सम्पूर्ण पुस्तक की साइज और मेकअप सुन्दर है, किन्तु प्रूफ की अशुद्धियाँ हर पृष्ठ में खटकती हैं। वाक्य-रचना बड़ी शिथिल-सी है, जो कि पाठकों को खटकेगी, किन्तु शायद वाक्य सजाने और सँवारने की कोशिश की गयी होती तो रिपोर्ट की मौलिकता नहीं रह जाती।

ग्रामदान-आन्दोलन में लगे कार्यकर्ताओं एवं समाज-शास्त्र का अध्ययन करनेवालों के लिए यह पुस्तिका बड़ी उपयोगी है।

—कपिल अवस्थी

स्वास्थ्योपयोगी प्राकृतिक चिकित्सा की पुस्तकें

		लेखक	मूल्य
कुदरती उपचार		महात्मा गांधी	०-८०
आरोग्य की कुंजी		,, ,,	०-४४
रामनाम		,, ,,	०-५०
स्वस्थ रहना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है	द्वितीय संस्करण	धर्मचन्द सरावगी	२-००
सरल योगासन	,, ,,	,, ,,	२-५०
यह कलकत्ता है	,, ,,	,, ,,	२-००
तन्दुरुस्त रहने के उपाय	प्रथम संस्करण	,, ,,	२-२५
स्वस्थ रहना सीखें	,, ,,	,, ,,	२-००
घरेलू प्राकृतिक चिकित्सा	,, ,,	,, ,,	०-७५
पचास साल बाद	,, ,,	,, ,,	२-००
उपवास से जीवन-रक्षा		अनुवादक ,, ,,	३-००
रोग से रोग-निवारण		स्वामी शिवानन्द	२०-००
How to live 365 day a year		John	22-05
Everybody guide to Nature cure		Benjamin	24-30
Fasting can save your life		Shelton	7-00
उपवास		शरण प्रसाद	१-२५
प्राकृतिक चिकित्सा-विधि		,, ,,	२-५०
पाचनतंत्र के रोगों की चिकित्सा		,, ,,	२-००
आहार और पोषण		झवेरभाई पटेल	१-५०
वनौषधि-शतक		रामनाथ वैद्य	२-५०

इन पुस्तकों के अतिरिक्त देशी-विदेशी लेखकों की भी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं।

विशेष जानकरी के लिए सूचीपत्र मँगाइए।

एक्मे, ८।१, एसप्लानेड ईस्ट, कलकत्ता–१

www.vinoba.in

लन्दन में भू-क्रान्ति दिवस का आयोजन

● लन्दन में भारतीय युवक श्री सतीशकुमार द्वारा १८ अप्रैल को भूदान-आंदोलन की अठारहवीं वर्षगाँठ पर एक विशेष रैली का आयोजन दि मार्टिन लूथर किंग फाउण्डेशन के तत्वावधान में किया गया। टाविस्टाक एसक्वायर स्थित महात्मा गांधी की प्रतिमा के पास से २०० नर-नारी हाथों में गांधी, विनोबा और मार्टिन लूथर किंग के चित्र लिये हुए मार्च कर रहे थे। उनके हाथों में "हम विनोबा भावे की अहिंसक भूमि-क्रान्ति का समर्थन करते हैं," आदि बैनर भी सुशोभित थे। सर्वप्रथम यह विशाल जुलूस भारतीय हाईकमीशन पहुँचा, जहाँ रेवरेण्ड कैनन कोलीन्स, सतीशकुमार और रेवरेण्ड कालिन होगेट के प्रतिनिधि-मण्डल का राजनीतिक परामर्शदाता ने भारतीय उच्चायुक्त की अनुपस्थिति में स्वागत किया। मि० कैनन कोलीन्स ने विनोबा भावे के समर्थन और समैक्य पर एक पत्र दिया। तत्पश्चात् पदयात्री 'लन्दन स्कूल आफ नानवायलेन्स' गये, जहाँ "ग्रामदान" विषय पर प्रवचन हुआ। वक्ताओं में सर्वश्री कैनन कोलीन्स, जियार्फे आसे, जार्ज क्लार्क, अर्नेस्ट वाडर, सतीशकुमार, निर्मल वर्मा और डोनाल्ड ग्रूम प्रमुख थे।

लन्दन के लिए यह प्रथम अवसर था, जब कि ग्रामदान-आन्दोलन के लिए लोक-समर्थन का इतना विशाल आयोजन हुआ। हजारों दर्शक यह जानने को व्यग्र थे कि ग्रामदान है क्या और यह विनोबा कौन हैं? श्री सतीशकुमार द्वारा ग्रामदान-आन्दोलन विषयक प्रकाशित नोटिस का जनता ने स्वागत किया।●

सर्व सेवा संघ कार्यालय क्रान्ति का 'सेल' बने

—अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् की कार्यकर्ताओं से मार्मिक अपील—

वाराणसी : ६ मई। सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय में नव-निर्वाचित अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने कार्यकर्ताओं की परिचय-सभा में बोलते हुए कहा—"ग्रामदान क्रान्ति का आध्यात्मिक और नैतिक ढाँचा है। ग्रामदान, जो अब प्रदेशदान की मंजिल पर पहुँच रहा है, क्रान्ति की शक्ति तभी बन सकेगा, जब हमारे हर साथी के दिल में क्रान्ति की त्वरा पैदा होगी। हम चाहे जिस किसी भी काम में लगे हों, हमारी चेतना में हरदम यह बात रहनी चाहिए कि हम एक महान् क्रान्ति के कर्ता हैं।" आपने कहा कि "क्षेत्र और कार्यालय के कार्यकर्ताओं में कोई भेद नहीं होना चाहिए। हर कार्यकर्ता को क्षेत्र में काम करना चाहिए और क्षेत्र के कार्यकर्ताओं को कार्यालय का काम भी करना चाहिए। जब ऐसी स्थिति आयेगी तभी सर्व सेवा संघ सच्चे अर्थों में क्रान्ति का 'सेल' और विनोबा के सन्देशों का वास्तविक वाहक बन सकेगा।" आपने गांधी जन्म-शताब्दी वर्ष और प्रत्यक्षतः उपलब्ध विनोबा के मार्गदर्शन में काम करने के अवसर को जीवन का सौभाग्य बताते हुए कहा कि "हम कार्यालय के चाहे जिस काम में लगे हों, हम सबसे पहले क्रान्तिकारी हैं और बाद में और कुछ!"

उत्तरप्रदेश

● बदायूँ जिले में २६, २७ मार्च को ग्रामदान-अभियान का प्रथम शिविर हुआ। शिविर के बाद ५० कार्यकर्ता गुन्नौर तहसील के रजपुरा ब्लाक में ग्रामदान-प्राप्ति हेतु गये। ५ अप्रैल को फलश्रुति-समारोह में रजपुरा का प्रखण्डदान घोषित हुआ।

● ६ अप्रैल को ग्रामस्वराज्य दिवस पर गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र कानपुर द्वारा आयोजित "सर्वोदय मित्र-मिलन" गोष्ठी में डा० सोमनाथ शुक्ल ने दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व से ही लोकशाही की वास्तविक प्रतिष्ठा बताया।

प्रो० ओंकारशंकर विद्यार्थी ने भारत और पाकिस्तान की सांस्कृतिक एवं भौगोलिक एकता के आधार पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होने की आशा व्यक्त की। श्री जाफर अली ने पाकिस्तान की मौजूदा हालत से खुदगर्ज राजनीतिज्ञों को सबक लेने की अपील की। इसी गोष्ठी में जालियाँवाला बाग के शहीदों का भी पुण्य स्मरण किया गया।

महाराष्ट्र

● श्री जयप्रकाश नारायण-सम्मान समिति, बम्बई की प्रथम बैठक ३१ मार्च को डा० पी० बी० गजेन्द्रगडकर के सभापतित्व में हुई जिसमें श्री जयप्रकाश बाबू के मित्रों और प्रशंसकों ने बम्बई महानगरी के उपयुक्त एक थैली भेंट करने का निश्चय किया है। श्री गजेन्द्रगडकर ने कहा कि देश में इस वक्त श्री विनोबाजी और जयप्रकाशजी ही हैं जो त्याग और सेवा के द्वारा जनता की वास्तविक सेवा में रत हैं। आपने कहा कि हम बम्बई-निवासी केवल सत्ता और राजनीतिज्ञों को ही आदर नहीं देते, अपितु लोकहित में सन्न्यस्त महात्माओं और देश के लिए कुरबानी करनेवालों को भी सम्मानित करने में पीछे नहीं रहते। इस अवसर पर उपस्थित संभ्रान्त लोगों की समिति धन-संग्रह हेतु बना दी गयी है।

हिमांचल प्रदेश

● हिमांचल प्रदेश में कांगड़ा जिले में सर्व सेवा संघ के परिपत्रानुसार सर्वोदय मंडल का गठन हुआ और श्री सत्यपाल (२६ वर्ष) सर्वसम्मति से संयोजक बनाये गये। आपने प्रदेश में सर्वोदय-साहित्य-प्रसार के लिए सतत प्रयत्नशील हैं।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।